5.

आधुनिक काल
(वि० सं० १९०० से आज तक)

काल सीमा तथा नामकरण

आधुनिक काल के सीमांकन तथा नामकरण को लेकर विद्वानों में मतभिन्नता पायी जाती है । किसी भी काल को सीमा में बाँधना एवं उसका नामकरण करना कठिन होता है । फिर भी आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आधुनिक काल का आरम्भ वि० सं० १९०० (सन् १८४३ ई०) से मानते हैं, जबकि मिश्रबंधु उनसे सहमत हैं । डॉ० नगेन्द्र आधुनिक काल का आरम्भ सन् १८५७ से मानते हैं । सन् १८५७ स्वतंत्रता संघर्ष की प्रथम घटना मानी जाती है । यह प्रथम घटना ही राष्ट्रीय चेतना एवं आधुनिक युग का प्रारम्भिक उद्‌घोष रही है । अतः १८५७ से आधुनिक युग का प्रारम्भ मानना युक्तिसंगत होगा ।

इस आधुनिक काल का विद्वानों ने गद्यकाल, विद्रोहकाल, परिवर्तन काल, नयाकाल आधुनिक काल आदि नामों से नामकरण करने का यत्न किया है। यथा - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'गद्यकाल', मिश्रबंधुओं ने 'परिवर्तनकाल' डॉ० प्रतिपाल सिंह ने 'विद्रोही काल' किसी ने इसे 'नूतन काल' या 'नया काल' तो किसी ने इसे 'आधुनिक काल' कहा है । 'आधुनिक काल' यह नामकरण प्रायः सभी ने स्वीकार किया है ।

आधुनिक काल का वर्गीकरण :

'आधुनिक काल' के साहित्य को प्रवृत्ति के आधार पर दो खण्डों में विभाजित किया जा सकता है - स्वतंत्रतापूर्व साहित्य (सन् १८५७ से १९५०) और स्वातंत्र्योत्तर साहित्य (१९५० से आज तक), क्योंकि सन् १८५७ के गदर का परिणाम सन् १९४७ में स्वतंत्रता के रूप में फलीभूत हुआ । सन् १९५० से प्रजातंत्रीय व्यवस्था का प्रारम्भ भारत के इतिहास में महत्वपूर्ण घटना है । इसलिए अध्ययन और सुविधा के लिए इस काल का वर्गीकरण निम्न रूप में किया जाना समीचीन हो सकता है :

(अ) स्वातंत्र्यपूर्व साहित्य :

१. प्रथम चरण : भारतेन्दु पूर्व युग - सन् १८०० से १८५७ ई० तक ।
२. द्वितीय चरण : भारतेन्दु युग (संक्रांति काल) सन् १८५७ से १९०० ई० तक।

३. तृतीय चरण : द्विवेदी युग (जागरण सुधार काल) सन् १९०० से १९१७ ई० तक।

४. चतुर्थ चरण : छायावाद युग (स्वच्छंदतावादी काल) - सन् १९१७ से १९३८ ई० तक ।

५. पंचम चरण : प्रगतिवाद युग (विद्रोहवादी काल) - सन् १९३८ से १९४३ ई० तक ।

६. षष्ठ चरण : प्रयोगवाद युग (प्रयोगवादी काल) सन् १९४३ से १९५३ ई० तक ।

(आ) स्वातंत्र्योत्तर साहित्य :

स्वाधीनता युग (स्वतंत्र लेखन काल) - सन् १९५३ से आज तक

आधुनिक काल की परिस्थितियाँ

आदिकाल, भक्तिकाल तथा रीतिकाल की परिस्थितियों का अध्ययन करना जितना अनिवार्य था उतना ही आधुनिक काल की परिस्थितियों का 'अध्ययन करना अनिवार्य है । परिस्थितियों का हिन्दी साहित्य के विकास में सदा योगदान रहा है । आधुनिक काल या नवीन काल हिन्दी साहित्य के सर्वतोमुखी विकास का काल है । कई बोलियों के स्थान पर खड़ी बोली को साहित्य रचना की भाषा के रूप में अपनाया गया । आधुनिक काल में हिन्दी साहित्य विभिन्न अन्तरराष्ट्रीय वादों से प्रभावित होकर उसमें गद्य का बहुमुखी विकास हुआ है ।

(१) राजनैतिक परिस्थिति :- आधुनिक काल में भारत की राजनीति में नये-नये मोड़ आये । राजनैतिक चेतना के उथल-पुथल को इस काल में देखा जा सकता है । अनेक समस्याएँ उभरती गयीं ।[१] इस संदर्भ में यज्ञदत्त शर्मा लिखते हैं कि - "इस काल में आकर राजनीतिक दृष्टि से देश के वातावरण में एक नये युग का आरम्भ होता है । मुस्लिम राजसत्ता छिन्न-भिन्न होकर समाप्त हो चुकी थी । हिन्दू रियासतों जैसी ही दशा मुसलमानी रियासतों की भी हो गयी थी । देश की सार्वभौमिक राजनीतिक सत्ता ईस्ट इण्डिया कम्पनी के हाथों में आ गई थी । न अब मुसलमानी साम्राज्य का ही स्वप्न शेष रह गया था और न हिन्दू राज्यों का ही । देश की राजनीतिक बागडोर एक नयी विदेशी सत्ता के हाथों में पहुँच गई थी । अंग्रेजी साम्राज्य अपने पूरे ताने-बाने के साथ भारत-भूमि पर छा गया था । अब मुसलमान भी विदेशी सत्ता के वैसे ही गुलाम थे, जैसे चन्द दिनों पूर्व हिन्दू ।"

वस्तुतः सन् १७५७ ई० में क्लायु ने कलकत्ते पर अधिकार करके अंग्रेजी राज्य की नींव डाली थी और इसके बाद सन् १८५७ में अंग्रेजों ने दिल्ली पर कब्जा किया ।[२] सन् १८५७ में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम हुआ, जिनमें झाँसी की रानी, तात्या टोपे आदि थे । भारतीयों

---

१. हिन्दी साहित्य का इतिहास - श्यामचन्द्र कपूर, प्र.सं. १८९१, पृ. १८७ ।

२अ. हिन्दी साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास : डॉ० कृष्णलाल हंस, प्र.सं. १९७४ पृ. ३७० ।

आ. हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ - डॉ० शिवकुमार शर्मा, पंचम संस्करण १९७० पृ. ४१६

के इस विद्रोह को देखकर अंग्रेज बहुत कठोरता से शासन करने लगे । अंग्रेजों के विरुद्ध इस पहली चिनगारी के बाद भारत में इंग्लैंड की महारानी विक्टोरिया का शासन आया । अंग्रेजी के प्रचार के लिए लॉर्ड मैकाले ने अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली का प्रचलन करवाया । इसके पश्चात् सन् १८८५ में काँग्रेस की स्थापना हुयी और इंडियन नेशनल काँग्रेस द्वारा सन् १९०५ में बंग-भंग के कानून से भारतीय स्वाधीनता की भावना तीव्र हुयी । 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' की घोषणा कर भीतर ही भीतर क्रांतिकारी संस्थाओं का निर्माण होने लगा, जिसमें तिलक; भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद, सुखदेव आदि थे । इसी समय काँग्रेस में दो दल बन गये - गरम दल और नरम दल । इसके बाद सन् १९०९ में मार्ले-मिन्टो सुधार कानून पास हुआ और मुसलमानों को अलग प्रतिनिधित्व दिया गया, जिससे हिन्दू-मुस्लिम दोनों को ठेस लगी । आगे चलकर बहुत प्रयत्नों के बाद सन् १९१६ में दोनों में समझौता हुआ । इसी समय नरम और गरम दल में भी समझौता हुआ । उधर संसार का प्रथम महायुद्ध छेड़ा गया जो सन् १९१४ से १९१८ तक चला, जिसमें भारतीयों का सक्रिय भाग था । सन् १९११ में 'रौलेट एक्ट' पास कर भारतीयों की आशाओं पर पानी फेर दिया गया । इसी समय ज़ालियनवाला बाग हत्याकांड हुआ । सन् १९२०में बाल गंगाधर तिलक के चले जाने के बाद काँग्रेस की बागडोर गाँधीजी ने सम्हाली । उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम को सम्मिलित कर असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ किया । उपाधियों का बहिष्कार करना, विदेशी वस्त्र जलाना आदि कार्य करके स्वदेशी वस्त्र खादी को महत्व दिया जाने लगा । इसी समय मोतीलाल नेहरू ने स्वराज्य पार्टी की स्थापना की । फलस्वरूप मिस्टर जिन्ना काँग्रेस छोड़कर मुस्लिम लीग में आ गये। सन् १९२० से १९३० तक अंग्रेजों की कूटनीति का दमनचक्र चलता रहा । इस बीच काँग्रेस और अंग्रेज सरकार की अनेक बैठकें हुयीं । सन् १९३० में सांप्रदायिक दंगे होकर गणेश शंकर विद्यार्थी जैसे देशभक्त मारे गये । सन् १९३१ से १९३५ तक कमीशनों, पैक्टों-संधियों का समय रहा, जिसमें विभिन्न प्रकार के करार हुए । सन् १९३७ में इंडियन नेशनल कांग्रेस के निर्वाचन हुए। सन् १९३९ में द्वितीय विश्वयुद्ध प्रारम्भ हुआ, जिसमें पुनः भारत सम्मिलित हुआ । सन् १९४० में मुस्लिम लीग द्वारा पाकिस्तान की माँग की गयी । सन् १९४२ में समस्त भारतीयों ने 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' का नारा दिया, जिसके कारण अनेक भारतीयों को जेल की सजा काटनी पड़ी । इसका परिणाम यह हुआ कि सन् १९४५ में ब्रिटेन में भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन को सहानुभूति प्राप्त हुई । लेकिन अखंड भारत के बहुत सतर्क रहने पर भी सन् १९४६ में फिर से साम्प्रदायिक दंगे भड़क उठे और १४ अगस्त १९४७ को भारत से पाकिस्तान अलग हो गया । १५ अगस्त १९४७ को अंग्रेजों ने भारत को आजादी दी और अंत में गणतंत्र का आविर्भाव हुआ ।

स्वतंत्रता के पश्चात् राजनीति में अनेक घटनाएँ हुयीं, जिनके कारण राजनीति में उतार-चढ़ाव आये । विश्वशांति के लिये पंचशील के सिद्धान्त को अपनाया गया । अनेक पक्षों की निर्मिति होकर उनका शासन प्रारम्भ हुआ । १९६२ में भारत-चीन के बीच युद्ध हुआ और १९६५ में भारत-पाकिस्तान के बीच युद्ध हुआ । १९७१ में बांग्लादेश का युद्ध होकर स्वतंत्र वंगलादेश का जन्म हुआ । इसके बाद कांग्रेस में आपसी फूट के कारण सन् १९७७ में 'जनता दल' सत्ताधारी बना । १९८० में पुनः कांग्रेस (इंदिरा गांधी) सत्ता में आयीं । १९८० के बाद

राजनीति के बोर्ड पर अनेक पक्ष उभरते-मिटते गये । १९८४ में इंदिरा जी का खून हुआ । पंजाब की समस्या तेजी से बढ़ रही थी । शासन की बागडोर राजीव जी चलाते-चलाते वे भी सन् १९९१ में मारे गये । तदनन्तर वी० पी० सिंह, चंद्रशेखर नरसिंह राव ने देश की बागडोर संभाली पर सन् १९९६ में सत्तान्तर होकर 'संयुक्त मोर्चा सरकार' कार्य करने लगी । प्रान्तों में भी युती सरकारें कार्यरत दिखाई देने लगीं । अटल विहारी वाजपेयी, देवेगौड़ा, इंद्रकुमार गुजराल के बाद पुनः वाजपेयी प्रधान मंत्री के रूप में आये । गठबंधन की सरकारें आती जाती रहीं । इस प्रकार बीसवीं शताब्दी के दसवें दशक में राजनीतिक परिवेश और भी गंदा परिलक्षित होता है ।

(२) **सामाजिक परिस्थिति :** आधुनिक काल में विदेशियों के साथ भारतीयों का संपर्क बढ़ने से सामाजिक रूढ़ियाँ एवं परम्पराएँ टूटने लगीं, जिससे धार्मिक कट्टरता धीरे-धीरे दूर होने लगी । इस बीच दयानंद जी का आविर्भाव होने से आर्य समाज का आंदोलन जनजागृति के लिये हुआ । इस समय बाल-विवाह, विधवा-विवाह, जाति-भेद, अंधविश्वास, स्त्री-शिक्षा आदि का विरोध होने लगा । आधुनिक काल के द्वितीय उत्थान में अर्थात् आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के युग में सामाजिक अशांति दूर होकर नवीन दृष्टिकोण से जीवन के नवीन मूल्य स्थापित हुये । इसी समय कुरीतियों को दूर करने और समाज को सुधारने का प्रयत्न हुआ । स्त्री-शिक्षा के प्रति चेतना, अछूतों के प्रति सद्भावना, दहेज की कुप्रथा दूर करने का भी प्रयत्न हुआ । इस युग के साहित्यकारों द्वारा नारी के प्रति विशेष रूप से करुणा व्यक्त की गयी, जैसे - ''आँचल में है दूध और आँखों में पानी ।'' आधुनिक काल के तीसरे चरण में मानवतावादी भावना का प्राबाल्य रहा, क्योंकि सामाजिक क्षेत्र में अधिक जनजागृति हुयी थी । सन् १९२९ में 'शारदा एक्ट' द्वारा बाल-विवाह निषेध हुआ था । १९३५ में 'गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट' द्वारा अछूतों को मताधिकार प्राप्त हुआ था । इसके अतिरिक्त विधवा विवाह आदि के संबंध में पृथक-पृथक कानून बनने लगे थे । स्वतंत्रता का आन्दोलन इन्हीं दिनों जन समुदाय को लेकर आगे बढ़ रहा था । विचारक सामाजिक स्थिति पर चिंतन-मनन करने लगे थे । उनमें गांधीजी की क्रियात्मक योजनायें अधिक सफल रहीं और मानवतावादी भावनाओं ने जोर पकड़ा । अहिंसा, सत्याग्रह, हिन्दू-मुस्लिम एकता, ग्रामोद्धार, अछूतोद्धार आदि में परिवर्तन आने लगा । 'खादी' भारतीय संस्कृति का प्रतीक बनी । विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने इस समय मानवतावाद का प्रचार और प्रसार किया । महान विचारक अरविन्द ने भी भारतीयों की सेवा की । ऐसे अनेक महानुभावों ने सामाजिक व्यवस्था में ठोस परिवर्तन लाने के प्रयत्न किये । युग के चतुर्थ उत्थान में देश की आर्थिक स्थिति में बदलाव आया और निराशा की भावना फैल गयी, क्योंकि द्वितीय विश्व-युद्ध इसी समय प्रारम्भ हुआ था । भारतीयों ने फिरंगियों के साथ संघर्ष करते-करते आजादी प्राप्त की थी ।

स्वातंत्र्योत्तर काल में जातिगत भेद-भावना का कानून द्वारा निवारण हुआ । स्त्रियों की सामाजिक स्थिति में हुआ और होकर उन्हें बराबरी का स्थान मिला । कृषक वर्ग शोषण से मुक्त हुआ, श्रमिक वर्ग की अवस्था में सुधार हुआ, विश्ववंधुत्व की भावना का प्रसार हुआ और सभी नागरिकों की संविधानानुसार अधिकार और कर्त्तव्य प्राप्त हुये । समाजवादी शासन की स्थापना से समता के लिये प्रयत्न किये जाने लगे । पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा देश का

आर्थिक विकास किया जाने लगा । इसी प्रकार अन्य अनेक योजनाओं से सामाजिक स्थिति में सुधार लाने का प्रयत्न होने लगा ।

आन्दोलनों से देश की शान्ति व्यवस्था को भंग करने का कार्य यदा-कदा असामाजिक तत्वों द्वारा होता रहा है । नवें-दसवें दशक में देश में यत्र-तत्र आन्दोलन हुए । ये आन्दोलन विभिन्न समस्याओं को लेकर किये गये । तहसील, जिला, प्रांत और देश के साथ रोटी, कपड़ा और मकान जैसी जीवनावश्यक समस्याओं को लेकर आन्दोलन होते रहे हैं ।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि सामाजिक सुधार करना ही इस शताब्दी की प्रमुख प्रवृत्ति रही है ।

(३) **धार्मिक परिस्थिति :** इस युग में धार्मिक परिवर्तन हुआ है; क्योंकि यंत्रों द्वारा काम लिया जाने लगा था । इस सुविधा के कारण पूजा-अर्चना में भी परिवर्तन आया । साम्प्रदायिक दंगे-फसाद बीच-बीच में होते रहे हैं । द्वितीय चरण में धार्मिक भावना का आधार मानवतावाद रहा है, जिसके कारण धार्मिक दंगे-फसाद थोड़े से कम हुये । तीसरे चरण में गांधीजी के मानवतावाद के कारण 'परायी पीर' जानने की भावनाओं को देखा जा सकता है । उनके अनुसार वही वैष्णव जन है, जो भगवान का भक्त है । गणतंत्र के आविर्भाव के साथ ही असांप्रदायिक जनवादी शासन आया । इसके पूर्व कार्ल मार्क्स के विचारों का प्रभाव जनता पर पड़ा था और भारतीय जनता 'वसुधैव कुटुंबकम्' की भावना से जीवन बितानें लगी ।

स्वातंत्र्य काल में ऊँच-नीच का विवाद बदलता गया और राष्ट्रीय एकता का नया अध्याय शुरू हुआ । राष्ट्रीय एकता को लेकर हर कोई प्रयत्न करने लगा । भारत विधर्मी राष्ट्र कहलाया जाने लगा । फिर भी आज गाय को मारना, मूर्ति का अवमान करना, राम जन्मभूमि जैसे मसलों पर धार्मिक दंगे-फसाद होना जारी ही है । धर्म का रूप भले ही बदला हो पर कहीं-कहीं कुछ देशवासी धर्म से इतने चिपके हुए हैं कि परम्परानुसार कुंभ मेले, त्यौहार, तीर्थ-यात्रा आदि आज भी मनाए जाते हैं । दूसरी ओर प्रगतिवादी समाज द्वारा धर्मांतर करना, प्रेमविवाह करना, अंतर्धर्मीय विवाह करना जैसे कार्य जारी हैं । इन कार्यों से धार्मिक स्थिति अक्षुण्ण रूप में दिखायी नहीं देती है । आज आडंबरता नहीं के बराबर भले ही है, फिर भी यत्र-तत्र कुछ मात्रा में दिखायी देती है ।

नवें-दसवें दशक में धार्मिक सुधारवादी चेतना प्रबल होती नजर आती है । अनेक धार्मिक कुसमस्याओं को दूर करने का यत्न हुआ । धर्म का मनमाना रूप अब अवरुद्ध होता जा रहा है । उस पर अशासकीय-शासकीय बंधन लगाये जाने लगे हैं । जितना कठोर उपाय किया जाना चाहिए, उतना नहीं हो रहा है । यदि अंधश्रद्धा निर्मूलन के लिए शासन एवं समाज कठोर उपाय करते गये, तो हमारा समाज पाश्चात्य समाज से भी आगे जा सकता है ।

(४) **आर्थिक परिस्थिति :** राजनैतिक और सामाजिक अवस्था के मूल में आर्थिक स्थिति रहती है । सन् १८५७ के प्रथम-स्वातंत्र्य युद्ध के पश्चात् अंग्रेजों की सत्ता प्रबल हुई, जिससे यह आशा बँधी कि देश की आर्थिक स्थिति में सुधार होगा पर सुधार के स्थान पर पतन होने लगा । हमारे देश में व्यवसाय व उद्योग धन्धे काफी फैले थे, परन्तु अंग्रेजों ने उन्हें नष्ट कर

भारत का आर्थिक शोषण करना प्रारम्भ कर दिया । एक ओर शोषण तो दूसरी ओर विदेशी पूँजी से नये उद्योग धन्धे स्थापित किये गये । रेल, डाक, तार की सुविधा आर्थिक-राजनैतिक दृष्टि से की गई । भारतीय औद्योगिक विकास में ब्रिटिश-सरकार की रुचि न रहने के कारण भारत का धन विदेश जाने लगा और आर्थिक-ह्रास होने लगा । ब्रिटिशों ने माल की खपत के लिए कर भी लगाये, जिससे उनका हित बढ़ने लगा । इस प्रकार विदेशी वस्तुओं का प्रचार धीरे-धीरे बढ़ता गया । पर भारतीय उद्योग-धन्धों की दशा बिगड़ती गई । भारतीयों ने आर्थिक गिरावट को देखकर समय-समय पर विरोध किया तथा आर्थिक सुधार की दृष्टि से आन्दोलन भी किये । यद्यपि जमींदारों के विरुद्ध किसानों संघर्ष चलता रहा । फिर भी किसानों की दुरवस्था होती गई और जमींदारों का अन्याय बढ़ता गया । इस समय का कृषक दरिद्र होकर दैन्य जीवन बिताने लगा । भारतीयों के गृह उद्योग धन्धे भी नष्ट हो गये । अंग्रेजों ने प्रथम विश्व-युद्ध तक भारत का औद्योगिक विकास नहीं किया । इसीलिये विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार किया गया। यंत्रों के विकास से और भी बेकारी की समस्या उपस्थित हुई जिससे वर्ग संघर्ष होने लगे। द्वितीय-विश्वयुद्ध के पश्चात् अंग्रेजों की आर्थिक नीति में परिवर्तन तो आया, लेकिन भारत में महँगाई और बेरोजगारी ज्यों कि त्यों बनी रही । हाँ इतना अवश्य हुआ कि भारत का औद्योगिक विकास मंद गति से होता रहा । मार्क्सवादी विचारधारा का प्रभुत्व बढ़ने लगा और देश के आर्थिक शोषण में बाधा निर्माण हुई । द्वितीय महायुद्ध की भयंकरता व निराशा की भावना पनपने लगी । श्रमिक वर्ग में चेतनता आने के कारण संगठन स्थापित होते रहे और वे विद्रोह करने लगे; इसी विद्रोह से भारत स्वतंत्र हुआ ।

स्वतंत्रता के बाद देश की आर्थिक स्थिति में सुधार आने लगा । धीरे-धीरे कृषक-श्रमिक वर्ग व्यक्ति स्वातंत्र्य के कारण परिश्रम करने लगा । आर्थिक चढ़ाव-उतार के कारण आर्थिक परिवर्तन होता गया । भारत एक कृषि प्रधान देश होने के कारण देश की उन्नति के लिए विविध प्रकार की योजनाएँ तैयार की जाने लगीं । समाज व्यवस्था को महत्व देकर पूँजीवाद का विरोध किया जाने लगा । पंचवर्षीय योजाएँ प्रारम्भ की गयीं । बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया । बैंकों द्वारा किसानों की उन्नति हेतु ऋण दिया जाने लगा । कहीं-कहीं सीलिंग की खेती दी गई । पिछड़े वर्गों के विकास के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई । उन्हें घर बनवाकर दिये जाने लगे और संजय गांधी निराधार योजना, नेहरू रोजगार योजना आदि का प्रवन्ध किया गया । विद्यार्थियों के लिए शिष्य वृत्ति दी जाने लगी । बच्चों को भोजन आदि की व्यवस्था की गई । इन्हीं दिनों अनेक घोटाले हर्षद मेहता काण्ड, जैन हवाला कांड आदि प्रकाश में लाये गये ।

कम्प्यूटर के इस युग में संगीत, खेल आदि यंत्र से प्राप्त कर सकते हैं । यांत्रिक मनुष्य हमें चलायमान रखकर मानों उन्नति की ओर ले जा रहा है। पोखरण जैसे अणु स्फोट की सफलता हमारी वैज्ञानिक क्षमता को ही प्रकट करती है ।

(५) **साहित्यिक परिस्थिति :** साहित्यिक परिस्थिति में विविध प्रकार के मोड़ आये हैं । श्रृंगार काल की कविता में जो रूढ़िवादिता थी उसमें परिवर्तन आया । उस समय का साहित्य दरवारी संस्कृति का साहित्य था । राज्याश्रय में पली श्रृंगारी कविता अलंकार प्रधान थी, किंतु

आधुनिक काल की कविता राज दरबार के बाहर की कविता बन गई । वह अब भरण-पोषण के लिए न होकर समाज के लिए लिकी जाने लगी । उस समय का कलाकार विशिष्ट ढँग की कविता को लेकर चलता था; किन्तु आज का कलाकार विशिष्ट के स्थान पर अविशिष्ट ढंग की कविता लिखने लगा । इसलिए आधुनिक काल में परिवर्तन दिखायी देता है । आज के साहित्य में जीवन के प्रति उदार दृष्टि परिलक्षित होती है । राज-महलों में पलने वाला साहित्य अब झोपड़ियों में आकर सुख-दुख की बातें करने लगा है । विशिष्ट कटघरे के साहित्य में अब उदारता-व्यापकता और विविधता आ गई है । साहित्य का प्रवाह आधुनिक युग की बदलती परिस्थितियों के अनुसार बदलता गया । सामंतकालीन सभ्यता का ह्रास होने के कारण साहित्य का विषय सामंती-संस्कृति का न रहकर जनवादी संस्कृति का हो गया, इससे साहित्य का रूप बदल गया । आधुनिक युग के संबंध में बाबू गुलाबराय लिखते हैं - ''अंग्रेजी राज्य के आने से लोगों का ध्यान जीवन की कठोर वास्तविकताओं की ओर गया । जीवन-संग्राम बढ़ा और साथ ही जातीय जीवन में जागृति हुई - - - । लोग अपनी सभ्यता को महत्त्व देने लगे - - -। हिन्दू लोगों ने विदेशी धर्मों का मुकाबिला करने के लिए अपने धर्म को बुद्धिवाद के आलोक में परिष्कृत करना प्रारम्भ किया । - - - ऐसे बुद्धिवाद और प्रतिद्वन्द्विता के समय में जनता के भावों के प्रकाशन के लिए केवल पद्य माध्यम नहीं हो सकता । अतः अंग्रेजी राज्य के साथ-साथ गद्य आया । - - -पद्य में ब्रज भाषा का साम्राज्य था, किन्तु नवीन युग के आ जाने पर उसकी कोमलकांत पदावली संघर्षमय कठोर भूमिका के लिए उपयुक्त न रही ।'' बाबूजी के उल्लेखित अवतरण के अनुसार यह कहा जा सकता है कि अंग्रेजी राज्य के आने से जन-जागृति हुई । भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अपनी 'मार्तण्ड' पत्रिका के माध्यम से अनेक कवि-लेखकों की देशवासियों के प्रति लिखी गई रचनाओं को प्रकाशित किया, कवि-लेखकों को प्रेरणा देने का कार्य भी उन्होंने किया । स्वयं कविताएँ, नाटक, कथा, निबंध आदि लिखकर जनजागरण किया । 'हा, हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई ।'

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से अनेक कवि एवं लेखकों के विचारों को प्रकाशित एवं प्रसारित किया । स्वयं द्विवेदी ने इस समय अपनी पत्रिका के माध्यम से जन-जागृति का कार्य किया । उसके पश्चात् छायावाद के अंतर्गत प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी वर्मा आदि ने साहित्य की सेवा की । उनके पश्चात् प्रगतिवाद के साहित्यकारों ने साहित्य को गढ़ा और साहित्य में परिवर्तन आया । प्रयोगवाद इसकी अगली सीढ़ी है, जिसके प्रवर्तक कवि अज्ञेय हैं । 'तारसप्तक' भाग एक का संपादन एवं प्रकाशन उन्होंने १९४३ में किया और आगे आजादी के बाद दूसरा, तीसरा चौथा सप्तक निकला ।

सन् १९४७ के बाद का साहित्य जनवादी साहित्य कहा जा सकता है, जिसके प्रारम्भ में प्रयोगवादी, नई कविता लिखी गयी । नये-नये प्रयोग कवियों ने किये । नई कहानी, साठोत्तरी कहानी, दशक की कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास आदि लिखे जाने लगे । उनमें नये-नये मोड़ आये । जनता दल के शासन से जो भी समाज में परिवर्तन आया, उसका प्रतिबिम्ब साहित्य में उभरा । नाटक, निबन्ध, एकांकी, उपन्यास कहानी, रेखाचित्र, जीवनी, आत्मकथा, डायरी, प्रवास वर्णन, शिकारी वर्णन आदि लिखे जाने लगे । आज पद्य की अपेक्षा गद्य के अमर्यादित रूप गोचर होते हैं ।

अतिवैयक्तिकता अनास्था-कुंठा की अभिव्यक्ति, क्षणवादिता, लघुभागवता, यथार्थ चित्रण, विषय वैविध्यता, अनुभव की प्रामाणिकता एवं बौद्धिकता इस युग के साहित्य की प्रधान विशेषता कही जा सकती है ।

(६) **कलात्मक परिस्थिति :** आधुनिक काल में वैज्ञानिक विकास के साथ विविध कलाओं के नाना-आयामों में उन्नयन हुआ । मोटे तौर पर कला-क्षेत्र चार वर्गों में विभक्त है - वास्तुकला (स्थापत्य), मूर्तिकला, चित्रकला और संगीत कला । कला-सर्जन के मूल में बाह्य वातावरण और परिस्थितियों के बीच उद्‌भूत मनुष्य की सूक्ष्म अंतरवृत्तियों की चेष्टाओं का निदर्शन मिलता है ।

वास्तुकला : आज वास्तुकला की दृष्टि से देवालय की अपेक्षा मस्जिद का स्वरूप सरल एवं बोधगम्य है, क्योंकि देवालय की दीवारों पर दैवी-लीलाओं तथा साज-सज्जा का अंकन हो सकता है, किन्तु मस्जिदों में इसके लिए अवकाश नहीं है । फिर भी आजकल रंग-विरंगे पत्थरों के प्रयोग द्वारा मस्जिदों को भी अलंकृत करने का प्रयास पाया जाता है । मंदिरों मस्जिदों के आकार-प्रकारों में परिवर्तन आने लगा है । ताजमहल, बीबी का मकबरा, कुतुबमीनार, चारमीनार, दुर्ग आदि वास्तुकला के पुराने उदाहरण हैं ।

स्वातंत्र्योत्तर कालखण्ड के उदाहरणों में संसद-भवन (दिल्ली), विधान भवन (बंगलौर) मैसूर का वृन्दावन बाग, सर सालारजंग म्यूजियम, स्तूप, पुल, विरला मंदिर, नेहरू भवन, डैम, विद्यापीठ वास्तु, गेट वे आफ इंडिया आदि उल्लेखनीय हैं । आज कवि अथवा कलाकार सर्जन व्यापार मुक्तता से करने में जुटा हुआ है । ये प्रतिभावान होते हुए भी अपने सर्जन का उत्तमोत्तम रूप प्रस्तुत कर रहे हैं। समृद्धि की ओर बढ़ रहे हैं । यह व्यय और अभ्यास साध्य कला होते हुए भी विकास की ओर अग्रसर है ।

मूर्तिकला : मध्ययुगीन मूर्तियाँ प्रायः देवी-देवताओं की हुआ करती थीं, परन्तु आज पाश्चात्य प्रभाव से उसमें वैविध्यता आयी है, उनमें लोकोन्मुखी भावनाओं तथा अनुभूतियों को भी स्थान मिलने लगा है । मूर्तिकला किसी एक धर्म तक सीमित नहीं रही है । आज राजनीतिक परिस्थितियाँ भी मूर्तिकला के विकास में सहायक हो रही हैं । गाँव के गली कूँचों से दिल्ली तक के चौराहों पर नेताओं की प्रतिमाएँ दृष्टिगोचर होने लगी हैं ।

इस्लाम में मूर्तिपूजा का कोई स्थान न रहने से वे प्रारम्भ से ही उससे कोसों दूर हैं; किन्तु मजार का महत्व रहने से मस्जिद-मकबरों आदि स्थलों पर वे नजर आते हैं । पारसी और यहूदी धर्म में भी लगभग वैसा ही मूर्ति का स्थान है । ईसाई धर्म में येशू आदि की मूर्तियाँ अधिक मात्रा में पूजी जाती हैं। सिक्ख धर्म में मजार जैसा मूर्ति-रूप पूजा जाता है, परन्तु जैन, बौद्ध और हिन्दू धर्म में भगवान की लीला विस्तार के साथ-साथ मूर्तियों की परिकल्पनाएँ-भंगिमाएँ साकार होती गयी हैं ।

स्वातंत्र्योत्तर कालखण्ड में विविध धातुओं के साथ प्लास्टिक एवं प्लास्टर ऑफ पेरिस की भी छोटी-बड़ी मूर्तियाँ गढ़ी जाने लगी हैं ।

ए० एक्स० त्रिनिदाद एक प्रसिद्ध शिल्पकार थे । रावबहादुर म्हात्रे का भी नाम प्रख्यात है । वास्तववादी शिल्पनिर्मिति उनकी विशेषता रही है । 'मंदिराकडे' की शिल्पकृति को लंदन की प्रदर्शनी में स्वर्णपदक प्राप्त हुआ। वि० पा० करमरकर भी एक प्रसिद्ध शिल्पकार हैं । पूना

में १४ फिट ऊँची शिवाजी महाराज की ब्राम-निर्मित अश्वारूढ़ प्रतिमा उन्होंने बनाई है । इसके लिए देश-विदेश में उन्हें पुरस्कार मिले हैं ।

चित्रकला : चित्रकला में दर्शन एवं अनुभूति का स्थान महत्व का होता है । चित्रकला के प्रारम्भिक नमूने गुफाओं में मिलते हैं, जिससे चित्रकारों की प्रतिभा, कला कौशल का आभास होता है । आदिकालीन चित्रों में तत्कालीन जीवन का दर्शन होता रहा है, जबकि मध्यकालीन चित्रों में नायक-नायिकाओं की प्रधानता रही है और आज अराजाश्रित चित्रकार उन्मुक्तता से उन्हें संवर्द्धन करने में लगा है । उसकी कला जनकला बन गई है । अब राजसी ठाटबाट का स्थान जनजीवन ने ले लिया है ।

आधुनिक काल में बहुत दिनों तक भारतीय चित्रकला पश्चिम का अनुकरण करती रही। त्रावनकोर के राजा रवि वर्मा पौराणिक एवं धार्मिक चित्रकार थे । उनके अनेक चित्रों को प्रकाशित करने का कार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से किया। उनके चित्र त्रिवेन्द्रम, मैसूर, बड़ौदा, उदयपुर, हैदराबाद, नई दिल्ली आदि के चित्र संग्रहालयों में हैं । उनके द्वारा बनाये गये लक्ष्मी, सरस्वती, सैरंध्री, मत्स्यगंधा, शान्तनु, शकुंतला आदि के चित्र अत्यन्त प्रसिद्ध हैं । सन् १८५४ में कलकत्ता आर्ट स्कूल की स्थापना के साथ ही भारतीय चित्रकला में नया मोड़ आया । ई० बी० हैबेल उसके अध्यक्ष थे । हैबेल, अवनीन्द्रनाथ ठाकुर तथा आनन्द कुमार स्वामी ने भारतीय चित्रशैली को आधुनिक रूप दिया । सन् १९०७ में गगनेन्द्रनाथ ठाकुर ने इंडियन सोसायटी ऑफ ओरिएंटल आर्ट्स की स्थापना कीं । इन प्रयत्नों का यह परिणाम हुआ कि भारतीय चित्र शैली का एक स्वतंत्र रूप निर्मित हुआ और भारतीय स्वतंत्रतन्दोलन में भी उसका सदुपयोग करवाया गया । आबालाल रहमान को सन् १८८५ व १८८९ ई० में वाइसराय के सुवर्ण पुरस्कार प्राप्त हुए । ए० एक्स, त्रिनिदाद भी प्रसिद्ध चित्रकार एवं शिल्पकार थे । वे सर जे० जे० स्कूल ऑफ आर्ट में अध्यापक थे । व्यक्तिचित्रों एवं नैसर्गिक चित्रों के लिए वे प्रसिद्ध थे। इसी काल में ऐतिहासिक, पौराणिक व सामाजिक विषयों पर चित्र निकालने वाले राव बहादुर का नाम लिया जाता है । उन्होंने जे० जे० स्कूल ऑफ आर्ट संस्था में विद्यार्थी, शिक्षक एवं संचालक के रूप में सन् १८८० से ४१ वर्षों तक कार्य किया । सन् १९२७ में अंग्रेज सरकार की ओर से उन्हें 'राव बहादुर' का खिताब दिया गया । अनेक प्रसिद्ध कलाकार उनके विद्यार्थी रहे हैं । सा० ल० हळदणकर का भी नाम चित्रकला विशारद के रूप में लिया जाता है । देश-विदेश से उन्हें अनेक पुरस्कार भी प्राप्त हुए हैं । भारत के अनेक कला संग्रहों में उनके चित्र हैं । स्वातंत्र्योत्तर काल में इस कला की प्रगति तीव्र गति से होती गई । कैमरा, सिनेमा, दूरदर्शन के आगमन से चित्कला और भी द्रुत गति से प्रगति की ओर बढ़ रही है ।

संगीत कला : इससे पूर्व का संगीत इतिहास संगीत घरानों का इतिहास रहा है, फिर भी उस काल में भारतीय एवं ईरानी संगीत का मेलजोल एक नया मोड़ लाया था (शास्त्रीय संगीत)। राजाश्रित संगीतकारों के घराने चल पड़े थे, पर वे आगे चलकर राजाश्रित होकर नये-नये वाद्यों के प्रयोग कर संगीत कला को विकसित करने लगे । विशेषकर गायन, नृत्य-पद्धतियों में विस्तार करने लगे । देवालयीय संगीत पद्धति, सह दरबारी संगीत पद्धति प्रायः लुप्त होकर आधुनिकता

की ओर अग्रसर होती गयी । पूर्व और पश्चिम के स्वरों का मिश्रण रवीन्द्र संगीत की संज्ञा से विभूषित हुआ और सन् १९१९ में अखिल भारतीय संगीत-परिषद् की स्थापना हुई। भारतीय संगीत में सबसे महत्वपूर्ण योगदान विष्णु नारायण भातखण्डे का है ।

स्वातंत्र्योत्तर काल में संगीत कला चटनी का मजा देने लगी है । अत्याधुनिक वाद्ययंत्रों के आविष्कार से यह नई नवेली दुल्हन-सी प्रतीत होती है । पॉप संगीत जैसे संगीत प्रकारों का मिश्र रूप रेडियो, सिनेमा, दूरदर्शन एवं वीडियो द्वारा सुन सकते हैं । संगीत का कलश कैसेट को मानकर इसे जब चाहे तब सुन सकते हैं । यह मनोरंजन के क्षेत्र में विज्ञान की अभूतपूर्व देन है ।

आधुनिक काल में वैज्ञानिक विकास के साथ विविध कलाओं के विविध आयामों में उन्नयन हुआ है, जबकि ये समस्त सूक्ष्म कलाएँ हैं । इनका परस्पर घनिष्ठ संबंध है । इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिक काल को आधुनिक बनाने में विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों का बड़ा हाथ रहा है ।

आधुनिक काल के साहित्य की विशेषताएँ

प्रत्येक काल की परिस्थिति के अनुसार निर्मित साहित्य से उस काल की विशेषताएँ बनती हैं । इस दृष्टि से आधुनिक काल के साहित्य की निम्नांकित विशेषताएँ हैं -

(१) **गद्य का विकास :** इसके पूर्व साहित्य का केवल काव्यांग ही विकसित हुआ था । अर्थात् साहित्य पद्य का पर्यायवाची बना था । मुद्रणालय या विविध यंत्रों के आने के कारण गद्य का बहुमुखी विकास हुआ । इस - विशेषता को ध्यान में रखकर आलोचकों ने इस काल का नामकरण 'गद्यकाल' किया है । इस काल में गद्य साहित्य के विविध रूप विकसित हुए हैं, जैसे - नाटक, कहानी, उपन्यास, निबंध, आत्मकथा, जीवनी, डायरी, रिपोर्ताज, रेखाचित्र, यात्रा-वर्णन, एकांकी, शिकार-वर्णन आदि ।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के युग में कविता, निबंध, नाटक, कथा, उपन्यास आदि लिखे गये, इस काल को 'संधियुग' या 'संक्रान्तिकाल' कहा जाता है । कुछ विद्वानों ने इसे 'नवजागरण काल' कहा है, और इसका समय सन् १८५७ से १९०० तक माना है । तदनन्तर महावीर प्रसाद द्विवेदी के काल में नाटक, कथा, कविता, निबंध आदि के माध्यम से सुधार लाने का प्रयत्न हुआ । इसलिये इस काल को 'सुधारकाल' भी कहा जाता है, इसका समय सन् १९०० से १९१८ माना जाता है । आधुनिक काल के छायावाद युग सन् १९१८ से १९३५ तक के कालखंड में प्रकृतिपरक कविताएँ लिखी गयीं । इस कालखंड में 'स्कंदगुप्त', 'चंद्रगुप्त' जैसे नाटक लिखे गये । निबंध, उपन्यास, कथा आदि गद्य विधाओं पर भी प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी आदि ने लेखन कार्य किया । 'गोदान', 'गबन' जैसे उपन्यास लिखे गये । इसके पश्चात् सन् १९३५ से १९४७ तक निबंध, नाटक, आत्मकथा, उपन्यास आदि गद्य विधाओं का लेखन हुआ, जिसमें रामविलास शर्मा, नागार्जुन, हरिवंशराय बच्चन, निराला आदि ने लेखन कार्य किया है । इस समय तक 'मधुबाला', 'मधुशाला' के रचयिता द्वारा 'नीड़ का निर्माण फिर', 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' आत्मकथा प्रकाश में आयीं ।

6.

भारतेन्दु युग (संक्रांति काल)

(सन् १८५७-१९०० ई०)

(अ) भारतेन्दु युगीन पद्य साहित्य

भारतेन्दुकालीन काव्यक्षेत्र विस्तृत है । तत्कालीन कवियों ने समकालीन परिवेश के प्रति जागरूक रहकर देशवासियों को सचेत करने का प्रयत्न किया है । सामाजिक चेतना मानो इस संक्रांति कालीन रचनाकारों का धर्म रहा है । उनके काव्य-साहित्य की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं ।

(१) **राष्ट्रीयता या देशप्रेम :** भारतीय वीरों में महाराणा प्रताप, छत्रसाल, शिवाजी आदि ने देश रक्षा के लिए जिस तत्परता और वीरता का परिचय दिया, उनका गुण-गान करने वाले कवि भूषण आदि हैं । भूषण की कड़ी को आगे ले जाने वाले कवि इस काल में हुए हैं । जैसे ''हमारो उत्तम भारत देश'' कहने वाले राधाचरण गोस्वामी और ''धन्य भूमि भारत सब रतननि की उपजावनि'' कहने वाले प्रेमघन आदि कवि इस समय लेखन कार्यरत थे । देश के उत्कर्ष तथा अपकर्ष की परिस्थितियों पर प्रकाश डालने का कार्य कर रहे थे । देशभक्ति की भावना से ओत-प्रोत ''भारत भारती'' में मैथिलीशरण गुप्त ने बहुत कुछ लिखा है । स्वयं भारतेन्दु, प्रताप नारायण मिश्र, राधाकृष्णदास आदि की कवितायें देशभक्ति परक रही हैं । यथा- भारतेन्दु की ''विजयिनी विजय वैजयन्ती'', प्रेमघन की ''आनन्द अरुणोदय'', प्रतापनारायण मिश्र की ''महापर्व'' और ''नया संवत'' तथा राधाकृष्णदास की ''भारत बारहमासा'' और ''विनय'' शीर्षक कविताएँ उल्लेखनीय हैं । प्रेरणादायी ऐसी कविताओं में भारतेन्दु जी की अंग्रेजों की शोषणनीति की भावना को देखिए,

'भीतर भीतर सब रस चूसै हंसि-हंसि के तन मन धन मूसै ।
जाहिर बातन में अति तेज क्यों सखि साजन ! नहिं अंग्रेज ।।

भारतेन्दु ने पराधीन भारत की दुर्दशा को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है -

''रोवहु सब मिलि कै आवहु भारत भाई ।
हा हा भारत दुर्दशा न देखी जाई ।।''

संक्रांति या भारतेन्दु काल के सशक्त कवि बालमुकुंद गुप्त ने उन दिनों के अंग्रेजी शासन व्यवस्था के प्रति तीव्र असंतोष व्यक्त करते हुए लिखा है -

''अंग्रेज राज सुख साज सजे सब भारी ।
पै धन विदेश चलि जाति यहै अति ख्वारी ।''

इस प्रकार इस युग के अन्य कवियों ने भी देशप्रेम को व्यक्त किया है ।

(२) **सामाजिक चेतना** : यह भारतेन्दु काल के पद्य-साहित्य की दूसरी विशेषता है । इस समय समाज में परंपरावादी लोग थे तो दूसरी ओर अंग्रेजी सभ्यता के लिये जीवन बिताने वाले लोग थे । सामाजिक जीवन पर प्रकाश डालने का कार्य इस समय के कवियों ने किया है। अंधश्रद्धा, कर्मकांड, वृद्धविवाह, भूतादि पूजन का विरोध कर समाज में फैले अन्याय अत्याचार, व्यभिचार, भ्रष्टाचार, बेकारी आदि सामाजिक समस्याओं को भी अभिव्यक्त किया गया है । विधवा विवाह, बालविवाह, अस्पृश्यता का विरोध भी काव्य के विषय रहे हैं । सुधारवादी कवियों में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, प्रतापनारायण मिश्र, प्रेमघन आदि गिनाये जा सकते हैं । प्रतापनारायण ने समाज की पीड़ा को इन शब्दों में व्यक्त किया है -

तबहि लख्यों जहँ रह्यो एक दिन कंचन बरसत ।
तहँ चौथाई जन रूखी रोटिहुँ को तरसत ।।

प्रेमघन की ''आर्याभिनंदन'', प्रतापनारायण मिश्र की ''होली है'', अंबिकादत्त व्यास की ''भारत धन'' शीर्षक कविताओं में विदेशी वस्त्रों और अन्य वस्तुओं के आयात को भारत की आर्थिक दुर्गति का मूल कारण माना गया है । प्रतापनारायण मिश्र ने एक गजल में देश की दुर्दशा पर गहरी चिंता प्रकट की है -

'अभी देखिये क्या दशा देश की हो,
बदलता है रंग आसमाँ कैसे-कैसे ।'

इस प्रकार उन दिनों के जनजीवन, परिवार, समाज और देश की हीनावस्था के चित्रण यत्र-तत्र मिलते हैं ।

(३) **हास्य व्यंग्य शैली** :- इस युग के काव्य में हास्य-व्यंग्य शैली की रचनायें प्राप्त होती हैं । समकालीन राजनैतिक विसंगति पर भी रचनायें लिखी गई हैं । हास्य-व्यंग्य की प्रचुरता रचना में दिखाई देती है । पश्चिमी सभ्यता, विदेशी शासन, सामाजिक अंधविश्वासों, रूढ़ियों, परंपराओं आदि विषयों पर हास्य-व्यंग्यात्मक शैली में प्रकाश डाला गया है । कविता के साथ-साथ अन्य विधाओं में भी यह प्रवृत्ति दिखाई देती है ।

इस काल के हास्य व्यंग्यकारों में प्रेमघन और प्रताप नारायण मिश्र प्रमुख हैं । 'प्रेमघन सर्वस्व' का 'हास्य-बिन्दु' शीर्षक प्रकरण समसामयिक स्थितियों के विनोदपूर्ण वर्णन और तज्जनित उद्‌बोधन की दृष्टि से ध्यान आकृष्ट करता है । प्रतापनारायण मिश्र की 'तृप्यन्ताम्', 'हरगंगा', 'बुढ़ापा' और 'कक्का राष्टक' शीर्षक कविताएँ भी अपनी नयी तर्ज के लिए प्रसिद्ध हैं।

अंग्रेजी-शिक्षा प्राप्त नवयुवकों द्वारा भारतीय रीतिनीति को त्यागकर पाश्चात्य सभ्यता का अनुकरण करने पर उन्होंने अत्यन्त मार्मिक व्यंग्य किया है,

'जग जानै इंगलिश हमैं वाणी वस्त्रहि जोय ।
मिटै वदन कर श्याम रंग जन्म सुफल तब होय ।।'

(४) **प्रकृति चित्रण :** आलोच्य युग के कवियों ने प्रकृति चित्रण में परंपरा का निर्वाह किया है, परंतु ठाकुर जगमोहन सिंह जैसे कवियों ने प्रकृति के दृश्यों का सूक्ष्म चित्रण किया है । कहीं प्रकृति के प्रेरक तो कहीं उद्दीप्त चित्रण भी मिलते हैं । भारतेन्दु कृत ''बसंतहोली'', अंबिकादत्त व्यास कृत ''पावस-पचासा'', गोविंद भाई कृत ''षड्ऋतु'' और ''पावस-पयोनिधि'' आदि रचनाओं में बसंत ऋतु और वर्षा ऋतु का आलम्बनात्मक चित्रण बिरल है । उसके स्थान पर ऋतु विशेष में नायिका की मनोदशा का वर्णन ही प्रमुख रहा है । भारतेन्दु की ''प्राप्त समीर'', प्रेमघन की 'मयंक महिमा', प्रतापनारायण मिश्र की 'प्रेम पुष्पांजली' जैसी कविताओं में प्रकृति के स्वतंत्र चित्रों का आभास होता है । प्रेमघन के वियोग को देखिये ।

'बगियान बसन्त बसेरो कियो, बसिए तेहि त्यागि तपाइए ना ।
दिन काम कुतूहल के जो बने, तिन बीच बियोग बुलाइए ना ।।'

अन्य रचनाकारों द्वारा भी निसर्ग का चित्रण हुआ है । लेकिन उसकी मात्रा कम है ।

(५) **पुरातन और नूतन का समन्वय :** भारतेन्दु युग में प्रमुखतया दो काव्यधाराएँ प्रवाहित थीं-

(१) श्रृंगारकालीन पतनोन्मुखी काव्यधारा और
(२) युगीन काव्यधारा ।

अर्थात् इस समय पूर्ववर्ती परंपरा और नवचेतना की धारा प्रवाहित थी । श्रृंगारिकता के साथ भक्ति की प्रवृत्ति भी दिखाई देती है । कुछ कवियों ने ईश्वर की अपेक्षा देश भक्ति पर अधिक कविताएँ लिखीं । भक्ति परक कविताएँ देशभक्ति से कम हैं और उनमें निर्गुण भक्ति की साधना अधिक परिलक्षित होती है । इसलिए ब्रह्मविचार इनकी कविता का विषय नहीं रहा, परंतु नश्वरता, मोहमाया आडंबर का विरोध इस काल के काव्य में दिखाई देता है। वैसे राम की अपेक्षा कृष्ण-काव्य की रचना इस काल में अधिक हुई है । भारतेन्दु, प्रेमघन, अम्बिकादत्त व्यास, राधाचरण गोस्वामी आदि की रचनाएँ इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय हैं । प्रतापनारायण मिश्र के अतिरिक्त प्रायः सभी मुख्य कवि श्रृंगार वर्णन की ओर उन्मुख रहे हैं। संक्रान्तिकाल होने के कारण इसयुग में कुछ रीतिग्रंथ भी लिखे गये। यथा- लछिराम कृत 'महेश्वर विलास', 'रामचन्द्र भूषण', 'रावणेश्वर', 'कल्पतरु, मुरारिदान का 'जसवन्त जसोभूषण', बालगोविन्द मिश्र कृत 'भाषाचन्द्र प्रकाश', प्रताप नारायण मिश्र कृत 'रस कुसुमाकर; कन्हैयालाल पोद्दार कृत 'अलंकार प्रकाश' इस युग के रीति ग्रंथ हैं । इस तरह पूर्व परम्पराओं को संजोते हुए इस काल के काव्य में परिवर्तित परिवेश के अनुरूप सामाजिक-राजनैतिक चेतना की भी अभिव्यक्ति हुई है ।

(६) **श्रृंगारिकता :** यह इस समय की गौण विशेषता रही है, क्योंकि रीतिकाल के पतन के साथ यह विशेषता धूमिल होती गई है, फिर भी भारतेन्दु कालीन कवियों ने श्रृंगार रस का प्रयोग कर अपनी रचनाएँ लिखी हैं । क्योंकि वे रस को काव्य की आत्मा मानते थे । प्रताप नारायण मिश्र के अतिरिक्त प्रायः सभी मुख्य कवियों ने श्रृंगार वर्णन किया है । जैसे- प्रेमघन ने सौंदर्य, प्रेम और विरह का वर्णन किया है । भारतेन्दु ने 'प्रेमसरोवर; 'प्रेमतरंग;, 'प्रेम-फुलवारी' आदि में भक्ति श्रृंगार और विशुद्ध श्रृंगार दोनों का समावेश किया है । भारतेन्दु ने स्वयं प्रेमदशा का वर्णन इस प्रकार किया है -

आजुलौं जौ न मिले तो कहा हम तौ तुम्हरे सब भाँति कहावैं ।
मेरो उराहनो है कछु नाहिं सबै फल आपुने भाग को पावैं ।
जो हरिचन्द भई सो भई अब प्रान चल्यौ चहैं तासों सुनावैं ।
प्यारे जू है जग की यह रीति विदा के समैं सब कंठ लगावैं ।।

(७) **मुक्तक काव्य रूपों का प्रयोग :** विवेच्य युग का अधिकांश काव्य मुक्तक काव्य रूपों में लिखा गया है । ठुमरी, दादरा आदि रागरागनियों की प्राचीन पद शैली तथा लावनी जैसे लोक गीतों की शैली भी इस युग के कवियों ने अपनाई है । उर्दू के गज़ल आदि काव्यरूपों का प्रयोग भारतेन्दु, प्रेमघन आदि ने किया है । प्रतापनारायण मिश्र ने 'शेर', 'मरसिया' आदि भी लिखे हैं । हरिनाथ पाठक, प्रेमघन, अम्बिकादत्त की कुछ रचनाएँ प्रबंधात्मक हैं । इस काल की कुछ कविताएँ परंपरागत छंदोबद्ध की भी नजर आती हैं । भारतेन्दु की 'रानी छलम लीला देवी', 'तन्मयलीला' प्रबन्ध गीति काव्य हैं । इस प्रकार इस समय की विविध रचनाएँ मुक्तक काव्यरूपों में लिखी गई हैं ।

(८) **अंग्रेजी-संस्कृत काव्य-रचनाओं का अनुवाद :** भारतेन्दु युग के कुछ कवियों ने संस्कृत और अंग्रेजी रचनाओं का अनुवाद किया है । जैसे- राजा लक्ष्मणसिंह द्वारा अनूदित 'रघुवंश' (१८७७) और 'मेघदूत' (१८८३) हैं । हरिश्चन्द्र ने 'नारदभक्तिसूत्र' और 'शांडिल्य भक्ति सूत्र' को 'तदीय सर्वस्व' (१८७४) और 'भक्तिसूत्र वैजयन्ती, शीर्षकों से अनूदित किया । बाबू तोताराम (१८४८-१९०२) द्वारा वाल्मीकिरामायण का 'रामनारायण' शीर्षक से भाषान्तरण भी काव्य कला की दृष्टि से साधारण प्रयास है । ठाकुर जगमोहन सिंह द्वारा अनूदित 'ऋतुसंहार (१८७६) और 'मेघदूत' (१८८३) इस काल की विशिष्ट कृतियाँ हैं । शब्दानुवाद के स्थान पर भावानुवाद को महत्व दिया गया। लाला सीताराम द्वारा अनूदित 'मेघदूत' (१८८३), 'कुमारसंभव (१८८४), 'रघुवंश' (१८९२), 'ऋतुसंहार' (१८९३) हैं । इन अनुवादों में दोहा, चौपाई, घनाक्षरी आदि छंदों का प्रयोग हुआ है, परंतु अनुवाद की भाषा सामान्य स्तर की लक्षित होती है।

अंग्रेजी काव्यकृतियों का रूपांतरण करने का कार्य श्रीधर पाठक ने किया है । गोल्डस्मिथ कृत 'हरमिट' और 'डिजर्टेड विलेज' को उन्होंने 'एकान्तवासी योगी' (१८८६) तथा 'उजड़ा ग्राम' (१८८९) के रूप में अनूदित किया है । इन अनुवादों में ब्रजभाषा के साथ खड़ी बोली का प्रयोग हुआ है । इस प्रकार काव्यानुवाद या काव्यकृतियों का भाषांतरण इस युग में हुआ है ।

(९) **काव्य में ब्रजभाषा का प्रयोग :** इस युग की भाषा उर्दूमयी हो गई थी, क्योंकि भास्तेन्दु, प्रेमघन, प्रतापनारायण मिश्र आदि कवियों की भाषा में उर्दू-अरबी, फारसी के शब्दों का प्रयोग हुआ है ; परंतु खड़ीबोली की कविताओं में ब्रजभाषा के शब्द अधिक मिलते हैं। अंग्रेजी के कुछ शब्दों को भी अपना लिया गया था । भोजपुरी बुंदेलखंडी, अवधी आदि भाषाओं के शब्दों के साथ मुहावरों, कहावतों को भी अपना लिया गया था । इस युग की ब्रजभाषा काव्यभाषा बन गई थी, परंतु आगे चलकर द्विवेदी युग में उसका आधिपत्य नष्ट हो गया ।

भारतेन्दुयुगीन कविगण : भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, प्रेमघन, कविनायक, भानु, प्रसाद 'पूर्ण', माधवप्रसाद मिश्र आदि ।

7.

द्विवेदी युग (जागरण सुधार काल)
(सन् १९००-१९१८ ई०)

(अ) द्विवेदीयुगीन पद्य साहित्य

(१) देशप्रेम या राष्ट्रीयता : इस युग के प्रवर्तक आचार्य महावीर प्रसाद थे । द्विवेदीयुगीन तत्कालीन कवियों ने समकालीन परिवेश के प्रति जागरूक रहकर देशवासियों में जागृतिकर सुधार लाने के लिए लेखन कार्य किया । इस सुधारकाल में फिरंगियों के विरोध में वे संकेतात्मक तथा प्रतीकात्मक भाषा का प्रयोग करते थे । उनके साहित्य की मुख्य प्रवृत्तियाँ निम्नांकितहैं। तत्कालीन कविता का मुख्य स्वर राष्ट्रभक्ति था । इस युग के प्रायः सभी कवियों ने देशप्रेम परक कविताओं का प्रणयन किया है । उन्होंने पराधीनता को सवसे वड़ा अभिशाप वताया है । पराधीनता के स्थान पर उन्होंने स्वतंत्रता की कल्पना कर स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए नागरिकों को प्रेरणा दी । कवि शंकर ने अपनी कविता ''बलिदान गान'' में लिखा है -

'देशभक्त वीरों, मरने से नेक नहीं डरना होगा ।
प्राणों का बलिदान देश की वेदी पर करना होगा ।।'

''स्वदेश संगति'' में मैथिलीशरण गुप्त ने ओजस्वी शब्दों में कहा है -

'धरती हिलकर नींद भगा दे
बज्र नाद से व्योम जगा दे
दैव और कुछ लाग लगा दे ।'

अन्य कवियों ने भी परोक्षरूप में परतंत्रता के बंधन काटने के संदेश दिए हैं । जैसे राम नरेश त्रिपाठी ने अपने खंडकाव्यों में दिया है । कुछ द्विवेदी युगीन कवियों ने बड़ी श्रद्धा और भक्ति से अतीत के गौरव का गान किया है । इस प्रकार की रचनाओं में मैथिलीशरण गुप्त की ''भारत भारती'' एक सशक्त रचना है । कवि भारत वर्ष की श्रेष्ठता इस प्रकार व्यक्त करता है-

'भूलोक का गौरव, प्रकृति का पुण्य लीला स्थल -
फैला मनोहर गिरि हिमालय और गंगाजल ।
संपूर्ण देशों से अधिक किस देश का उत्कर्ष है ?
उसका कि जो ऋषि भूमि है, वह कौन ? भारतवर्ष है ।'

दूसरी ओर देश की वर्तमान दशा पर क्षोभ प्रकट किया गया । इसी संदर्भ में ठाकुर गोपालशरण सिंह की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं ।

'वह धीरता कहाँ है गंभीरता कहाँ है ?
वह वीरता हमारी है वह कहाँ बढ़ाई ?
क्या हो गई कलाएँ कौशल सभी हमारे ?
किसने शताब्दियों की ली छीन सब कमाई ?'

इस युग के रायदेवी प्रसाद ''पूर्ण'' ने भरत खंड के हाल पर इस प्रकार प्रकाश डाला है -

'भरतखंड का हाल जरा देखो है कैसा ।
आलस का जंजाल जरा देखो है कैसा ।।
जरा फूट की दशा खोलकर आँखें देखो ।
खुदगर्जी का नशा खोलकर आँखें देखो ।।
है शेखी दौलत की कहीं, बल का कहीं गुमान है ।
है खानदान का मद कहीं, कहीं नाम का ध्यान है ।।'

इस प्रकार द्विवेदी युगीन कवियों ने देशभक्ति की रचनाएँ लिखकर चेतनता लाने का प्रयास किया है । स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग तथा विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार पर भी उन्होंने बल दिया है । मातृभूमि की महिमा का गान इस समय के अनेक कवियों ने किया है ।

(२) **मानवतावाद** :- इस युग के पूर्ववर्तीय काव्य में राजा, योद्धा, ईश्वर और नायक-नायिकाओं को स्थान मिला था, परन्तु द्विवेदी युग में सामान्य मानव को स्थान मिला। मानव मात्र के सुख-दुख का वर्णन इस समय के काव्य में सहज भाव से मिलता है । महावीर प्रसाद द्विवेदी की कविता ''सरगौ नरक ठेकाना नाहिं'' की पंक्तियाँ इस संदर्भ में उल्लेखनीय हैं-

'भैंसि भवानी कै तब सेवा लागे करन पढ़ब गा छूटि ।
बटुवन दूध दुहा इन हाथन धारन कबहुँ दुहत मां टूटि ।।
मोटरिन कटिया मथुरा सानी कीन रोज हम बांह चढ़ाय ।
मस्त भयन तब आल्हा गावा उपर दुहत्था हाथु उठाय ।।

इस युग में सामान्य मानव के सामान्य विषयों पर प्रकाश डाला गया है । 'अविद्या नंदन' के व्याख्यान में विदेशीयता का रसिक व्यंग्य देखिये -

'छड़ी धार छैला छबीले बनो, रंगीले, रसीले, फबीले बनो ।
न चूको भले भोग भोगी बनो, किसी बेड़नी के वियोगी बनो ।।

आलोच्य युग में दीन, किसान, विधवा आदि के कारुणिक वर्णन किये गये हैं । मैथिलीशरण गुप्त की ''किसान'' (१९१७), सियारामशरण गुप्त की ''अनाथ'' (१९१७) तथा कवि सनेही की ''कृषककंदन'' कविताओं में कृषक जीवन का वर्णन है । नाथूराम शर्मा ''शंकर'' की ''गर्भरंण्डा-रहस्य'' में विधवा नारी का मार्मिक चित्रण हुआ है । अशिक्षित नारियों की दुर्दशा का वर्णन भी इस समय के काव्य में मिलता है । अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने तत्कालीन जाति-प्रजाति पर प्रकाश डाला है -

'आप आँखें खोलकर के देखिये,

आज जितनी जातियाँ हैं सिरधरी ।
पेट में उनके पड़ी दिखलायेगीं,
जातियाँ कितनी सिसकती या मरी ।'

अतः इस युग के कवियों ने जनसाधारण को अपने काव्य का विषय बनाया है ।

(३) **नीति और आदर्श का वर्णन :** महावीर प्रसाद द्विवेदी के इस युग का काव्य नीतिपरक और आदर्शवादी माना जाता है । पौराणिक कथा-प्रसंगों के आधार पर जो प्रबन्ध-काव्य लिखे गये, उनमें आदर्श तथा नीति का वर्णन मिलता है । उन सभी में असत्य पर सत्य की विजय दिखाई गई है तथा निस्वार्थता, कर्तव्यपरायणता, आत्मगौरव आदि आदर्शों की प्रेरणा दी गई है । यथा - 'हरिऔध कृत 'प्रियप्रवास', मैथिलीशरण गुप्त कृत 'साकेत', 'रंग में भंग', 'जयद्रथ वधः', 'विकटभट', गोकुलचन्द्र शर्मा कृत 'गांधीगौरव', रामनरेश त्रिपाठी कृत 'मिलन' आदि इस युग की आदर्शवादी रचनाएँ हैं ।

कुछ लघु पद्यकथाएँ भी नीति और आदर्श के उद्देश्य को लेकर लिखी गई हैं । जो समय-समय पर 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित हुई हैं । नीतिपरक कविता में पंडित रामचरित उपाध्याय लिखते हैं–

'अति खल की संगति करने से, जग में मान नहीं रहता है ।
लोहे के संग में पड़ने से, घन की मार अनल सहता है ।।
सबसे नीति-शास्त्र कहता है, दुष्ट संग दुख का दाता है ।
जिस पय में पानी रहता है, वही खूब औटा जाता है ।।'

कवि ने नीतिशास्त्र की बात करके संगति पर प्रकाश डाला है । इसी समय के कुछ कवियों ने प्रेम के आदर्श को भी दोहराया है । 'प्रिय प्रवास', 'साकेत', 'मिलन' आदि में उसका उदात्त स्वरूप देखा जा सकता है । राधा और कृष्ण के माध्यम से वह सफल हुआ है । प्रेम एक अद्भुत शक्ति है और उसके बिना जीवन निस्सार है । कवि रामनरेश त्रिपाठी इस संदर्भ में लिखते हैं -

'गंधविहीन फूल है जैसे चंद्र चंद्रिकाहीन ।
यों री फीका है मनुष्य का जीवन प्रेम विहीन ।।
प्रेम स्वर्ग है, स्वर्ग प्रेम है, प्रेम अशंक अशोक ।
ईश्वर का प्रतिबिम्ब प्रेम है, प्रेम हृदय आलोक ।।'

इस प्रकार प्रेम का अद्वितीय वर्णन द्विवेदी युगीन काव्यों में मिलता है ।

(४) **वर्ण्य विषय का विस्तार :** इस युग में वर्ण्य विषय का विस्तार हुआ है । उसमें वैविध्य और व्यापकता आई । नूतन विषयों पर लेखन कार्य हुआ । महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'कविकर्तव्य' निबंध में लिखा था - ''चींटी से लेकर हाथी पर्यंत पशु, भिक्षुक से लेकर राजापर्यंत मनुष्य, बिन्दु से लेकर समुद्रपर्यंत जल, अनंत आकाश, अनंत पृथ्वी, अनंत पर्वत' - सभी पर कविता हो सकती है । इसका आशय यह है कि ब्रह्मांड का कोई भी अंग कविता का विषय वन सकता है । इस उद्धरण की पूर्ति के साथ साधारण से अतिसाधारण विषयों पर कविताएँ

लिखी गई । जैसे कृषक, प्रणय, निद्रा, साधु, ब्रह्मचर्य, बालक, मूढ़ मानव, मेंहदी, कामना, कुलीनता, पौरुष, विद्या, शिशु स्नेह, सुखमय जीवन, लक्ष्मीलीला, सपूत, ग्रामगौरव, दरिद्र विद्यार्थी, सज्जनों का स्वभाव आदि ।

इस युग में प्रकृति का स्वतंत्र रूप में चित्रण किया गया । मैथिलीशरण गुप्त, हरिऔध, रामनरेश त्रिपाठी, गिरिधर शर्मा, गोपालशरण सिंह आदि कवियों के काव्य में निसर्ग चित्रण मिलता है । 'प्रियप्रवास' में वर्णित प्रकृति का रूप देखिये -

'दिवस का अवसान समीप था ।
गगन था कुछ लोहित हो चला ।।
तरु शिखा पर थी अब राजती ।
कमलिनी कुल वल्लभ की प्रभा ।।'

आलोच्य युग में तत्कालीन 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित राजा रवि वर्मा, बाबू ब्रजभूषण राय चौधरी आदि के चित्रों पर भी कविताएँ लिखी गई । ऐसे कवियों में महावीर प्रसाद द्विवेदी मैथिलीशरण गुप्त, नाथूराम शर्मा 'शंकर' तथा रायदेवी प्रसाद 'पूर्ण' आदि थे।

(५) **हास्य व्यंग्य शैली का प्रयोग :-** इस युग में भी हास्य व्यंग्य की शैली रही है, परंतु भारतेन्दु युग जैसी हास्यव्यंग्य पूर्ण कविता की प्रचुरता नहीं रही । अर्थात् हास्य और व्यंग्य में शिथिलता आई । हास्यव्यंग्य के विषय शोषण, आडंबर, फैशन परस्ती आदि रहे हैं । महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरगौ नरक ठेकाना नाहिं' में गांव को छोड़कर शहर जाने वाले तथा विदेशी सभ्यता का अनुकरण करने वाले लोगों का चित्रण इन शब्दों में किया है -

'अचकुन पहिरि बूट हम बाटा बाबू बनेन डेरात-डेरात ।
लागेन आवै जाय सभन मां कण्ठु फूट तब बना बतात ।।
जब तब हमरे तन मां तनिको रहा गाउं के रस का अंसु ।
तब तक हम अखबार किताबैं लिखि लिखि कीन उजागर बंसु

इस युग के अन्य सशक्त व्यंग्यकार बालमुकुंद गुप्त हैं । गुप्तजी ने तत्कालीन वाइसराय लॉर्ड कर्झन पर इन शब्दों में व्यंग्य कर हास्य को आलंबन बनाया था -

''हमसे सच की सुनो कहानी, जिससे मरे झूठ की नानी ।
सच है सभ्य देश की चीज, तुमको उसकी कहाँ तमीज ?
औरों को झूठा बतलाना, अपने सच की डींग उड़ाना ।
ये ही पक्का सच्चापन है, सच कहना तो कच्चापन है ।''

एक अन्य कविता 'आजकल का सुख' में गुप्तजी ने स्वार्थी, खुशामदी और विलासियों की खबर ली थी ।

नाथूराम शर्मा 'शंकर' भी द्विवेदी युग के एक हास्य-व्यंग्यकार हैं । 'गर्भरण्डा रहस्य' इनकी प्रसिद्ध व्यंग्य कविता है, जिसमें गर्भ में ही विधवा हो जाने वाली बालिका के माध्यम से सामाजिक कुरीति का पर्दाफाश किया है तथा सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक कुरीतियों एवं

आंडबरों पर व्यंग्य किये गये हैं । कवि ने विदेशियों की नकल करने वाले भारतीयों का खूब मजाक उड़ाया है

'भड़क भुला दो भूतकाल की, सजिये वर्तमान के साज ।
फैसन फेर इंडिया भर के, गोरे गॉड बनो बृजराज ।।

ईश्वरीप्रसाद शर्मा तथा जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी आदि के नामों का उल्लेख भी इस संदर्भ में किया जा सकता है ।

(६) **विविध काव्य रूपों का प्रयोग** - इस युग में विविध काव्य रूपों का प्रयोग परिलक्षित होता है । प्रबंध, मुक्तक, प्रगीत आदि काव्यरूपों में रचनाएँ हुई । 'प्रिय प्रवास', 'साकेत' तथा 'रामचरित चिंतामणि' इन महाकाव्यों का प्रणयन इस युग में हुआ। हिन्दी के श्रेष्ठ खंड काव्य भी इसी काल की देन है, जिनमें मैथिलीशरण गुप्त कृत 'रंग में भंग', 'जयद्रथ वधः', 'किसान', प्रसादजी कृत 'प्रेम पथिक' (१९१३), सियारामशरण गुप्त कृत 'मौर्यविजय' (१९१४), रामनरेश त्रिपाठी कृत 'मिलन' (१९१७) तथा गोकुलचंद्र शर्मा कृत 'गांधी गौरव' उल्लेखनीय हैं। पद्यकथाओं का भी इस काल में निर्माण हुआ, जिनमें 'विकटभट', 'केशों की कथा', 'शकुन्तला जन्म', 'सरगौ नरक ठेकाना नाहिं', 'रुक्मिणी संदेश', 'सती सीता', 'वीरपंचरत्न' आदि प्रमुख हैं । मुक्तक रचना लगभग सभी कवियों ने की । छोटे-छोटे विषयों को लेकर स्वतंत्र पद्यों की रचना भी की गई । नाथूराम शर्मा तथा अयोध्यासिंह उपाध्याय ने अनेक सुंदर मुक्तक लिखे। रत्नाकर ने प्रबंध मुक्तक 'उद्धव शतक' की रचना की । इस युग में प्रगीतों का भी प्रणयन हुआ । मैथिलीशरण गुप्त, मुकुटधर पाण्डेय तथा माखनलाल चतुर्वेदी के नाम इस संदर्भ में लिये जा सकते हैं ।

(७) **भाषा-छंद अलंकारों में विविधता** :- इस युग में 'खड़ी बोली' काव्य की मुख्य भाषा बनी । प्रारंभ में खड़ी बोली काव्य नीरस तुकबंदी के अतिरिक्त कुछ नहीं था, किन्तु उसमें उत्तरोत्तर निखार आया । 'जयद्रथ-वध', 'भारत-भारती' आदि रचनाओं के कारण खड़ी बोली की जीत हुई । खड़ी बोली में परिपक्वता, सुबोधता तथा शुद्धता आयी और अनेक कवि-लेखकों ने रचनाएँ कीं ।

आलोच्य युग में वर्ण्य विषय के समान ही छन्द के क्षेत्र में विविधता आयी । दोहा, कवित्त या सवैया के साथ रोला, छप्पय कुण्डलिया, गीतिका आदि छन्दों का प्रयोग होने लगा। मैथिलीशरण गुप्त, हरिऔध, 'शंकर' आदि ने छन्द प्रयोग में अपने कौशल का परिचय दिया । महावीरप्रसाद द्विवेदी, गयाप्रसाद शुक्ल, भगवानदीन आदि सवैया, छप्पय आदि ने लगभग सभी छन्दों का प्रयोग किया है ।

इस युग के प्रायः सभी कवियों ने छन्दों सहित अलंकारों का भी प्रयोग किया है ।

(८) **इतिवृत्तात्मकता** :- वस्तुतः इस शैली का सूत्रपात भारतेन्दु के समय में हुआ । द्विवेदी युग में यह शैली परिपक्वता पा गई । इस शैली के अपनाने से काव्य में शुष्कता और नीरसता आ गई । इस गंभीर शैली के साथ हास्य-व्यंग्य शैली भी इस काल में विद्यमान रही।

उपदेशात्मक और प्रबंधात्मक काव्य-रचना में इतिवृत्तात्मकता का प्राधान्य रहा है । भारतेन्दु युग में साहित्य की जिन विधाओं का सूत्रपात हुआ, उसका इस युग में विकास हुआ।

उपर्युक्त परिभाषाओं से 'छायावाद' के निम्नलिखित लक्षण दर्शाये जा सकते हैं :

(१) छायावाद एक शैली विशेष है ।

(२) छायावाद प्रकृति में मानव-जीवन का प्रतिबिम्ब देखता है । अर्थात् प्रकृति का मानवीकरण करता है ।

(३) छायावाद एक दार्शनिक अनुभुति है ।

(४) छायावाद एक भावनात्मक दृष्टिकोण है ।

(५) छायावाद प्रकृति में आध्यात्मिक सौंदर्य देखता है ।

(६) छायावाद में प्रेम का चित्रण होता है ।

(७) छायावाद स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह है । (आत्मा-परमात्मा का विद्रेह) ।

छायावादी काव्य की विशेषताएँ

(१) व्यक्तिवाद की प्रधानता : हिन्दी के छायावादी-काव्य की मूलभूत प्रवृत्ति व्यक्तिवाद है । अर्थात् छायावादी कविता मूलतः व्यक्तिवादी कविता है, जिसमें सबसे पहले व्यक्ति के सुख-दुख की अभिव्यक्ति है । इसी व्यक्तिवाद का चरम प्रयोगवादी कविता में देखने को मिलता है । जयशंकर प्रसाद ने सबसे पहले अपनी कविता के विषय सुख-दुखों को ही वनाया । उनके प्रसिद्ध ग्रंथ 'आँसू', 'झरना' तथा 'लहर' में इसी प्रवृति के दर्शन होते हैं ।

छायावादी कविता को मूलतः व्यक्तिवाद की कविता कही जाती है । प्रोफेसर शिवकुमार शर्मा के शब्दों में ''छायावादी-कवि को अपने व्यक्तित्व के प्रति अगाध विश्वास था और उसने बड़े उत्साह से काव्य के भाव एवं कला-पक्ष में निज व्यक्तित्व का प्रदर्शन किया । अहं भावना की प्रवृत्ति भी इनमें थीं, इसी कारण काव्य में वैयक्तिक सुखदुख की अभिव्यक्ति खुलकर हुई है'' यथा :

''मैंने 'मैं' शैली अपनाई,
देखा एक दुखी निज भाई,
दुख की छाया पड़ी हृदय में
झर उमड़ वेदना आई ।''

निराला

इसी तरह ''हम दीवानों की हस्ती'' नामक कविता में भगवती चरण वर्मा ने भी लिखा है -

''हम दीवानों की क्या हस्ती
है आज यहाँ कल चले वहाँ ।''

(२) प्रकृति चित्रण :- प्रकृति प्रेम छायावाद की सबसे प्रमुख विशेषता है । सभीछायावादी कवियों ने अपने काव्य में प्रकृति का चित्रण बड़े ही आग्रह से किया है । वे प्रकृति में विशेषतया नारी का रूप देखते हैं । उसकी छवि में किसी प्रेयसी के सौंदर्य-वैभव का साक्षात्कार करते हैं। ऐसी ही प्रकृति सौंदर्य और प्रेम की व्यंजना पंत के काव्य में दिखाई पड़ती है -

'छोड़ द्रुमों की मृदु छाया, तोड़ प्रकृति से भी माया ।'
बाले ! तेरे बाल जाल में, कैसे उलझा दूँ लोचन !!

निसर्ग-सौंदर्य-प्रियता छायावाद काव्य की प्रमुख प्रवृत्ति है । छायावादी कवियों में पंत जी का प्रकृति चित्रण अद्वितीय है । पंतजी प्रारम्भ से ही प्रकृति के अनन्य प्रेमी रहे हैं । प्रकृति की आधार शिला पर ही उनका काव्यभवन खड़ा है । प्रकृति ही कवि की प्रेरक शक्ति रही है। इस लिए पंतजी ने प्रकृति को माँ, सहचरी, प्राण कहकर पुकारा है । जैसे -

'उस फैली हरियाली में,
कौन अकेली खेल रही माँ ।'
- - - वयवाली में ।''

प्रसाद, निराला, महादेवी वर्मा आदि सभी प्रमुख छायावादी कवियों की कृतियों में प्रकृति नारी के रूप में अंकित की गयी है । कवि पंत ने निसर्ग के अंग-अंग में स्पंदन पायाहै। 'नौकाविहार' आदि उनकी कविताएँ प्रकृति चित्रण के बेजोड़ उदाहरण हैं । उनमें अंग्रेजी के कीट्स, वर्ड्सवर्थ और शैली इन रोमांटिक कवियों की विचारधाराओं का संगम है ।

छायावाद के दूसरे कवि निराला ने भी निसर्ग को सुंदरी के रूप में व्यक्त किया है । उनकी प्रसिद्ध कविता 'संध्या-सुंदरी' में संध्या को मेघमय आकाश से उतरती हुई परी के रूप में दिखाया गया है -

''दिवसावसान का समय
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह संध्या-सुन्दरी परी-सी
धीरे-धीरे-धीरे।''

महादेवी ने भी प्रकृति में चेतना का आरोप किया है । वह बसन्त रजनी को क्षितिज से बुला रही है -

'धीरे-धीरे उतर क्षितिज से
आ वसन्त रजनी ।'

(३) वेदना और निराशा का वर्णन :- वेदना और करुणा का प्राधान्य छायावाद की प्रमुख विशेषता रही है । हर्ष, शोक, हास्य, रुदन जन्म-मरण, विरह-मिलन आदि से उत्पन्न विषमताओं से घिरे हुए मानव जीवन को देखकर कवि के हृदय में वेदना और करुणा उमड़ पड़ती है । दूसरी ओर छायावादी कवि सौंदर्य प्रेमी है, किंतु सौंदर्य की क्षणभंगुरता को देखकर उसका हृदय व्याकुल भी हो उठता है । पन्त तो काव्य की उत्पत्ति का मूल कारण ही वेदना को मानते हैं -

''वियोगी होगा पहला कवि
आह से उपजा होगा गान;
उमड़कर आँखों से चुपचाप
बही होगी कविता अनजान ।'' (पल्लव पन्त पृ. २४)

ज्ञानपीठ पुरस्कृत महादेवी के लिए वेदना या पीड़ा ही सब कुछ है । महादेवी को करुणा की साक्षात मूर्ति कहा जाता है । उनके काव्य में वेदना साकार हो उठती है -

'तुमको पीड़ा में ढूँढ़ा
तुममें ढूँढूँगी पीड़ा ।'

दूसरे एक स्थान पर वह यह कहती है -

'मैं दुख से श्रृंगार करूँगी ।'

और भी वह कहती है -

''मिलन का मत नाम लो,
विरह में मैं चूर हूँ ।''

इस प्रकार महादेवी के वेदनानुभूति में साधनात्मक जीवन का दृढ़ स्वर मुखरित हुआ है।

(४) **अलौकिक प्रेम का दर्शन (अज्ञात के प्रति आकर्षण) :-** छायावादी कविता में अलौकिक प्रेम का चित्रण बहुत अधिक हुआ है । यह अलौकिक प्रेम चित्रण या अज्ञात सत्ता के प्रति आकर्षण ही रहस्यवाद कहलाता है । छायावादी काव्य में बाह्य पदार्थों की अपेक्षा आंतरिकता की प्रवृत्ति अधिक रही है । उनकी यही प्रवृत्ति रहस्यवाद की ओर अग्रसर करती है । छायावादी कवियों ने कहीं-कहीं आंतरिक अनुभूतियों के प्रदर्शन के रूप में रहस्यवादी कविता की सृष्टि की है । रहस्यवाद छायावाद की दूसरी सीढ़ी है । महादेवी और प्रसाद जी के काव्य में रहस्य भावना का सुन्दर परिपाक हुआ है । महादेवी जी कहती हैं -

'मधुर-मधुर मेरे दीपक जल
युग-युग प्रतिदिन, प्रतिक्षण, प्रतिपल,
प्रियतम का पथ आलोकित कर ।'

(५) **राष्ट्रीयता (देश प्रेम) की भावना :-** छायावादी कवियों ने अपने काव्य में स्वतंत्रता का आह्वान उसी प्रकार किया है, जिस प्रकार पी० बी० शैली और वर्ड्सवर्थ ने अपनी रोमैंटिक कविता में किया था । छायावाद के सशक्त कवि जयशंकर प्रसाद के असंख्य गीतों में देश प्रेम की भावना की झलक देखने को मिलती है -

'अरुण यह मधुमय देश हमारा
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा ।'

प्रसाद का भी एक जागरण गीत है :-

'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती ।
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती ।।'

इसी प्रकार ''फूल की चाह'' नामक कविता में माखनलाल चतुर्वेदी ने भी प्रतीकात्मक ढंग से कहा है -

'मुझे तोड़ लेना वनमाली, उस पथपर देना तुम फेंक ।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने, जिस पथ जावें वीर अनेक ।।'

(६) **मानवतावाद :-** छायावादी कवियों पर दयानंद, विवेकानंद, टैगोर, गांधी और अरविंद का प्रभाव दिखता है । इनकी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति के कारण छायावादी कवियों ने

रूढ़ि परम्पराओं का अधिक खण्डन किया है । कवि पंत ने अथक परिश्रम करने वाली चींटी का आदर्श मनुष्य के सामने प्रस्तुत किया है -

'चींटी को देखो
देखो ना किस भाँति
काम करती वह सतत
दिन भर में वह मीलों चलती
अथक कार्य से वह कभी न टलती ।'

युगों-युगों से उपेक्षित नारी को बंधन से मुक्त करने का स्वर भी छायावादी कवियों में मिलता है । पन्त कहते हैं -

'मुक्त करो नारी को
युग-युग की कारा-बंदिनी नारी को ।'

इसी प्रकारे जयशंकर 'प्रसाद' ने भी अपनी 'कामायनी' में कहा है :-

''औरों को हंसते देखो मनु !
हंसो और सुख पाओ ।''

(७) **नारी सौन्दर्य (प्रेमचित्रण)** :- नारी के प्रति छायावाद में सर्वथा; नवीन दृष्टिकोण अपनाया गया है । यहाँ नारी वासनापूर्ति का साधन नहीं है, बल्कि यहाँ तो वह प्रेयसी, जीवनसहचरी, माता आदि विविध रूपों में उभरी है । फिर भी उसका मुख्य रूप प्रेयसी का ही रहा है । यह प्रेयसी पार्थिव-जगत् की स्थूल नारी नहीं है; वरन् कल्पना लोक की सुकुमार देवी है । वैसे तो समस्त छायावादी कवियों ने नारी के सूक्ष्म सौन्दर्य का वर्णन किया है, किन्तु प्रसाद के काव्य में नारी की प्रतिष्ठा हुई है । वे उसे देवी मानते हैं । यथा-

(१) 'तुम देवि ! अहा कितनी उदार'

(२) 'नारी तुम केवल श्रद्धा हो ।'

कवि की अभिव्यक्ति स्पष्ट और मांसल न होकर कल्पनामय या मनोमय है । कवि प्रेम को शरीर की भूख न समझकर एक रहस्यमयी चेतना समझता है। इस प्रकार निराला, महादेवी, पंत आदि ने नारी सौंदर्य का वर्णन किया है ।

(८) **विज्ञान का प्रभाव** :- कहा जाता है कि छायावादी कवि कल्पनालोक में ही विचरण करता रहा है और उसमें व्यक्तिवाद की प्रधानता रही है, किन्तु उसने युगानुरूप कविताओं की सृष्टि भी की है । आज के वैज्ञानिक युग की सबसे बड़ी विशेषता बौद्धिकता है । इसी बौद्धिकता के कारण विश्व का जीवन अशांत और असंतुलित है । प्रसाद जी ने अपने विख्यात महाकाव्य 'कामायनी' में युग की घात-प्रतिघातों का चित्रण किया है । आज का विश्व जीवन हृदय और वुद्धि के समन्वय में है, इसीलिए प्रसाद जी लिखते हैं :

''ज्ञान दूर कुछ क्रिया भिन्न है, इच्छा क्यों पूरी हो मन की ।
एक दूसरे से न मिल सके, यह विडंबना है जीवन की ।।''

इस विशेषता का दर्शन अन्य कवियों के काव्य में भी होता है ।

(९) प्रतीकात्मकता :- प्रतीकात्मकता छायावाद की अन्य विशेषता है । प्रतीकवादी कवि प्रस्तुत के स्थान पर अप्रस्तुत का प्रयोग करते हैं । जैसे - निराशा की अभिव्यक्ति करनी हो, तो अंधकार का वर्णन किया जाता है । प्रसाद ने निम्नांकित पंक्तियों में मानसिक द्वंद्व का वर्णन इस प्रकार किया है :

''झंझा झकोर गर्जन था, बिजली थी नीरद माला ।
पाकर इस शून्य हृदय को, सबने आ डेरा डाला ।।''

यहाँ झंझा, झकोर मानसिक द्वंद्व का प्रतीक कहा जा सकता है । बिजली मन में उमड़ने वाले विचारों का प्रतीक हो सकता है । वस्तुतः छायावादी कवि प्रकृति प्रेमी होते हैं, इसलिए इन कवियों ने प्रकृति के बीच में अपनी शोभा तथा भावनाओं को देखा है । छायावादी कवि के जीवन में वह प्रतीक बनकर आई है । प्रकृति के प्रतीकों को लेकर उन्होंने अपने सुख-दुःखों की अभिव्यक्ति की है । फूल सुख का प्रतीक, शूल दुःख का प्रतीक, उषा प्रफुल्लता का प्रतीक, संध्या उदासी का प्रतीक, गुलाब यौवन का प्रतीक आदि । महादेवी वर्मा की प्रतीकात्मक कुछ पंक्तियाँ देखिये -

''यह पतझड़ मधुवन भी हो
शूलों का दंशन भी हो
कलियों का चुंबन भी हो ।''

(१०) मानवीकरण (परसानीफिकेशन) :- मानवीकरण छायावाद की प्रमुख विशेषता रही है । प्रसाद ने प्रकृति को अनेक स्थलों पर नारी के रूप में व्यक्त किया है । जैसे -

''पगली ! हा, सँभाल ले कैसे छूट पड़ा तेरा आँचल ।
देख निखरती है मणि रानी, अरी उठा बेसुध चंचल ।।''

एक कविता में वे उषा को अंबर के पनघट पर तारों के घट डुबाती हुई नागरी के रूप में देखते हैं :

''बीती विभावरी जाग री
अंबर पनघट में डुबो रही
तारा घट उषा नागरी ।''

(लहर से)

यहाँ कवि ने उषा का मानवीकरण किया है और उसे नागरी नारी के रूप में पनघट पर पानी भरते बताया है । पंत, निराला, आदि ने भी मानवीकरण का चित्रण किया है ।

छायावादी कवि मानव जीवन की समस्त भावनाओं व अनुभूतियों की अभिव्यक्ति भी निसर्ग के माध्यम से करता है । महादेवी के काव्य में इस प्रवृत्ति का आधिक्य है । वह कहती हैं-

(१) 'मैं नीर भरी दुःख की बदली ।'

(२) 'प्रिय सांध्य जगत-सा मेरा जीवन ।' आदि ।

(११) चित्रात्मक भाषा (चित्रात्मकता) :- चित्रात्मकता छायावाद की एक विशेषता रही है । कवि प्रसाद ने चित्रात्मक भाषा का प्रयोग किया है । जैसे -

"शशि मुख पर घूँघट डाले, आँचल में दीप छिपाये ।
जीवन की गोधूली में, कौतूहल से तुम आये ।।"

छायावादी कवि ने परम्परागत उपमा-उपमानों से संतुष्ट न होकर नवीन उपमा-उपमानों की सृष्टि की है । कवि निराला ने विधवा का चित्रण इस प्रकार किया है :

"वह इष्ट देव के मंदिर की पूजा-सी,
वह दीपशिखा-सी शांतभाव में लीन ।"

महादेवी वर्मा तथा सुमित्रानन्दन पंत के भी काव्यों में चित्रात्मकता का दर्शन होता है ।

(१२) **अलंकार विधान :-** छायावादी कवियों ने प्राचीन अलंकारों के अतिरिक्त अंग्रेजी साहित्य से दो नवीन अलंकार अपनाए हैं -

(क) मानवीकरण (ख) विशेषण विपर्यय ।

मानवीकरण के कई उदाहरण इनकी कविताओं से दिये जाते हैं, जबकि विशेषण विपर्यय अलंकार के उदाहरण यत्र-तत्र परिलक्षित होते हैं, यथा :-

"तुम्हारी आँखों का बचपन,
खेलता जब अल्हड़ खेल ।।"

छायावादी कवि ने अमूर्त को मूर्त और मूर्त को अमूर्त के रूप में भी सबसे पहले प्रस्तुत किया है । यहाँ अप्रस्तुत के लिए प्रस्तुत और प्रस्तुत के लिए अप्रस्तुत के उदाहरण देखे जा सकते हैं :

(क) 'कीर्ति किरण-सी नाच रही है ।'

(ख) 'बिखरी अलकें ज्यों तर्क जाल ।'

(१३) **गेयता :-** यह छायावाद की गौण विशेषता है । इसमें गीतिकाव्य के सभी गुण उपलब्ध हैं । जैसे संक्षिप्तता, आत्माभिव्यक्ति भाषा की कोमलता और मधुरता । डॉ० रामनाथ सुमन के शब्दों में, "इन कवियों में जो मस्ती है, भावना एवं अनुभूति की कोमलता है और मानव जीवन के उत्कर्ष का जो गौरव है, उसे देखते हुए उनकी प्रतिभा गीतिकाव्य की रचना के लिए अत्यंत उपयुक्त थी । ऐसा कहा जा सकता है कि गीतिकाव्य के लिए सौंदर्य और स्वानुभूति का होना अत्यंत आवश्यक है । ये सारी विशेषाएँ छायावादी कवियों में मिलतीहैं।" डॉ० नगेन्द्र भी इसके गीतितत्व पर मुग्ध होकर कहते हैं कि- "इस कविता का गौरव अक्षय है और उसकी समृद्धि, समता केवल भक्तिकाल ही करता है ।" इसीलिए आज हम कभी कभार दूरदर्शन पर इन छायावादी कवियों के गीत देखते और सुनते हैं ।

(१४) **कल्पना की पुष्टि :-** छायावादी कवि कल्पना के द्वारा एक ओर वह अतीत में जा पहुँचता था, तो दूसरी ओर भविष्य के स्वर्णयुग को आँखों के सामने साकार करता था। एक ओर असीम आकाश में उड़कर आनंद-लोक बसाता था, तो दूसरी ओर वस्तुगत रहस्यों का पता लगाता था । अर्थात् कल्पना उसकी राग शक्ति थी और बोध-शक्ति भी ।

कालिदास की रचना में कल्पना गौण थी और वास्तविकता उनका प्रधान लक्ष्य था, पर आधुनिक कवियों की रचना में कल्पना का बाहुल्य है । यथार्थ + बंड़ल = कल्पना । कल्पना

प्रगतिवाद की प्रमुख प्रवृत्तियाँ :

१. जनशोषण का विरोध (शोषकों के प्रति घृणा),
२. समसामयिक समस्याओं के प्रति जागरूकता,
३. नारी के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण (नारी चित्रण),
४. धर्म का विरोध,
५. साम्यवादी देशों के प्रति अन्ध श्रद्धा (रूस का गुणगान),
६. क्रांति का विरोध,
७. रूढ़ियों का विरोध,
८. शोषितों का करुण गान (शोषितों के प्रति सहानुभूति),
९. सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्रण,
१०. बौद्धिकता और व्यंग्य प्रचार,
११. मानवता का सर्वोच्च स्थान (मानवतावाद),
१२. पाश्ववाद (Fascism) का विरोध ।

१. जनशोषण का विरोध (शोषकों के प्रति घृणा) :- मार्क्सवादी समीक्षक काव्य का मूलाधार आर्थिक मानते हैं । आर्थिक आधार पर मार्क्सवाद में समस्त मानव जाति को शोषक और शोषित नामक दो वर्गों में विभाजित किया गया है । शोषक वर्ग के अंतर्गत भूपति, पूँजीपति आदि और शोषित वर्ग में कृषक, मजदूर, नारी व भिक्षुक आदि आते हैं । अब तक साहित्य में प्रायः शोषकों का ही प्रशस्ति चित्रण होता था और शोषितों के प्रति ध्यान नहीं दिया जाता था । अतएव प्रगतिवादी कवियों ने शोषकों के प्रति आक्रोश व्यक्त किया और शोषितों के प्रति सहानुभूति व्यक्त की है । इस प्रकार प्रायः सभी प्रगतिवादी कवियों ने शोषित वर्ग के हृदय विदारक चित्र अंकित किये हैं और वे स्वयं को जनमन का गायक ही कहते हैं,

'हम लेखक हैं, कथाकार हैं
हम जीवन के भाष्यकार हैं
हम कवि हैं जनवादी ।'

केदारनाथ अग्रवाल

प्रगतिवादी कवि सामाजिक जीवन की विषमता को देखकर आक्रोशमयी प्रलयकारिणी वाणी में कहता है -

'श्वानों को मिलता वस्त्र-दूध, भूखे बालक अकुलाते हैं ।
माँ की हड्डी से चिपक ठिठुर, जाड़ों की रात बिताते हैं ।
युवती की लज्जा बसन बेच, जब व्याज चुकाये जाते हैं।'

दिनकर

२. समसामयिक समस्याओं के प्रति जागरूकता :- प्रगतिवादी साहित्यकार राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय सभी समस्याओं पर जागरूक होकर जातीय कलह, महंगाई, बेकारी, अकाल आदि पर काव्य रचना कर अपने युग की समस्याओं के प्रति जागरूकता भी व्यक्त करता है -

'आजादी की कलियाँ फूटी, पाँच साल में होंगे फूल,
पाँच साल में फल निकलेंगे, रहे पंतजी झूला झूल,
पाँच साल कम खाओ भैया, गम खाओ दस पन्द्रह साल,
अपने ही हाथों से झोंको, यों अपनी आँखों में धूल ।' नागार्जुन

कवि कल्पना लोक की उपेक्षा कर यथार्थ जीवन और उसकी समस्याओं में ही रमा है। प्रगतिवादी कवियों ने समसामयिक अनेक समस्याओं को अपने काव्य का विषम बनाया है। जैसे 'बंगाल का अकाल' कश्मीर समस्या, हिन्दुस्तान-पाकिस्तान समस्या आदि । कवि इन समस्याओं के साथ ही दारुण घटनाओं से भी प्रभावित हुआ है । राष्ट्रपिता महात्मागांधी के निधन पर प्रगतिवादी कवि व्याकुल होकर कह उठता है -

'बापू मेरे !
अनाथ हो गई भारतमाता ।'

३. नारी के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण :- मार्क्सवादी कवियों की दृष्टि में नारी भी शोषित है, जबकि पुरुष आज तक उसे अपने विलास का साधनमात्र समझता रहा है ; परंतु प्रगतिवादी कवियों ने उसे विलास का साधन नहीं माना है । उसे बराबरी का मानकर उसकी इज्जत करने लगे हैं । नारी को संकीर्ण क्षेत्र से बाहर निकलकर जीवन की व्यापक-वसुंधरा पर प्रवेश करना है । इसलिए प्रगतिवादी कवि नारी को केवल योनिमात्र नहीं मानते वह कहता है -

''योनि नहीं है रे नारी, वह भी मानवी प्रतिष्ठित ।
उसे पूर्ण स्वाधीन करो, वह रहे न नर पर अवसित ।। सुमित्रानन्दन पंत

और भी नारी के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण इन पंक्तियों में परिलक्षित होता है -

'वह तोड़ती पत्थर
इलाहाबाद के पथ पर ।' निराला

४. धर्म का विरोध :- मार्क्सवाद की दृष्टि में धर्म पूँजीपतियों और शोषकों का रक्षक है। उनके अनुसार धर्म व ईश्वर भ्रम मात्र ही है । मार्क्सवाद ऐसे धर्म की उपेक्षा करता है - जो निर्धनों के शोषण का साधन है । धर्म भोली-भाली जनता को बहकाने के लिए शोषकों द्वारा निर्मित एक अस्त्र ही है । इस प्रकार प्रगतिवादी कवि भी ईश्वर की सत्ता, आत्मा, परलोक, भाग्य, धर्म, स्वर्ग, नर्क आदि पर तनिक भी विश्वास नहीं करता। इसीलिए वह कहता है -

''ऊपर बहुत दूर रहता है, शायद आत्म-प्रवंचक एक ।
जिसके प्राणों में विस्तृत है, उर में सुख श्रीकर अतिरेक ।।
रामेश्वर शुक्ल ''अंचल''

५. साम्यवादी देशों के प्रति अंधश्रद्धा [रूस का गुणगान] :- प्रगतिवादी साहित्यकारों ने साम्यवादी देशों का गुणगान करते हुए उनके प्रति अंधश्रद्धा व्यक्त की है । इस संदर्भ में श्री नरेन्द्र शर्मा ने अपनी ''लाल निशान'' नामक कृति में यहाँ तक कह दिया है कि -

'लाल रूस का दुश्मन साथी,
दुश्मन सब इन्सानों का ।'

इस धारा के बहुत से कवियों ने साम्यवाद के प्रवर्तक कार्लमार्क्स तथा रूस जहाँ उनकी विचारधारा पल्लवित और पुष्पित हुई दोनों ही का गान किया है । कवि, कार्लमार्क्स के गीत गाते समय यह भूल गया है कि यह विचारधारा और इसकी मान्यताएँ हमारे देश के लिए भी उपयोगी हैं या नहीं । जो भी हो प्रगतिवादियों ने मार्क्स को मानव देवता मानकर उसका गुणगान किया है ।

६. क्रांति की भावना :- मार्क्सवादी क्रांति के कट्टर समर्थक हैं और वे सामंतवादी परंपराओं का समूल नाश आवश्यक समझते हैं । अतः प्रगतिवादी कवि ''क्रांति के उन प्रलयंकारी भैरव स्वरों का आह्वान करता है, जिनसे जीर्ण-शीर्ण रूढ़ियाँ एवं परंपराएँ किसी गहन अतल में सदा के लिए विलीन हो जायें ।'' वह पूंजीपतियों के गगनचुम्बी महलों को भूमिसात देखने का इच्छुक है, क्योंकि साम्यवादी व्यवस्था के लिए सामंतवादी [अमीर वर्ग] परंपराओं का नष्ट होना आवश्यक है । उन्हें समझौते या हृदय परिवर्तन की नीति पर विश्वास नहीं है । प्रगतिवादी कवि इसके लिए क्रांति चाहता है । कवि बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' आह्वान करते हैं -

'कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ,
जिससे उथल-पुथल मच जाये ।
एक हिलोर इधर से आये
एक हिलोर उधर से आये ।'

वैसे समस्त प्रगतिवादी कवियों का विश्वास क्रांति में ही है । इसलिए कवि पंत भी क्रांति का आह्वान करते हुए कहते हैं -

''आ कोकिल वरसा पावक कण,
नष्ट-भ्रष्ट हो जीर्ण पुरातन ।'

कवि नवीन जी समाज में फैली दुर्दशा को देखकर अत्यंत प्रभावित होते हैं और उसे नष्ट करने के लिए उत्तेजित होकर क्रांति का आह्वान करते हैं -

'क्या देखा है तुमने नर को नर के आगे हाथ पसारे ?
क्या देखे हैं तुमने उसकी आँखों के खारे फव्वारे ?
देखे हैं ? फिर भी कहते हो कि तुम नहीं हो विप्लवकारी ?
तब तो तुम हिजड़े हो, या हो महाभयंकर अत्याचारी ?
अरे चाटते जूठे पत्ते जिस दिन देखा मैंने नर को ।
उस दिन सोचा, क्यों न लगा दूँ आज आग इस दुनिया भर को ।

यह भी सोचा, क्यों न टेंटुआ घोटा जाय स्वयं जगपति का
जिसने अपने ही स्वरूप को रूप दिया इस घृणित विकृति का ।

७. रूढ़ियों का विरोध :- प्रगतिवादी कवि सर्वप्रथम सृष्टिकर्ता ईश्वर संबंधी हमारे अंध-विश्वासों पर ही आघात करता है, क्योंकि वह जागतिक संघर्ष को ही सृष्टि के विकास का आधार मानता है । प्रगतिवादी कवि के लिए मंदिर, मस्जिद, गीता, कुरान आदि कोई महत्व नहीं रखते । वह अंधविश्वासों, परंपराओं, रूढ़ियों पर प्रखर प्रहार करके मानव को केवल मानव के रूप में देखना चाहता है उसके लिए मानव सर्वोपरि है । अनेक प्रगतिवादी कवियों ने ईश्वर का और इन आडम्बरों का कड़ा विरोध किया है । 'नवीनजी' के शब्दों में -

'जगपति कहाँ ? अरे, सदियों से वह तो हुआ राख की ढेरी ।'
वरना समता-संस्थापन में लग जाती क्या इतनी देरी ?
छोड़ आसरा अलख शक्ति का, रे नर, स्वयं जगत्पति तू है,
यदि जूठे पत्ते चाटे, तो तुझ पर लानत है औ थू है ।

इससे आगे भी वे कहते हैं -

'जिसे तुम कहते हो भगवान
जो बरसाता है जीवन में
रोग, शोक, दुःख दैन्य अपार
उसे सुनाने चले विचार ।'

८. शोषितों का करुण गान (शोषितों के प्रति सहानुभूति) :- प्रायः सारे प्रगतिवादी काव्य में शोषित वर्ग के जीवन के अध्याय जुड़े हुए हैं ; जिसके संबंध में कवि निराला का यह वर्णन बड़ा मार्मिक बन पड़ा है -

'वह आता
दो टूक कलेजे के करता, पछताता पथ पर आता ।

इससे भी आगे प्रगतिवादी कवि गरीब और मजदूरों के साथ सहानुभूति व्यक्त करते हुए लिखता है -

'ओ मजदूर, ओ मजदूर,
तू ही सब चीजों का कर्ता,
तू ही सब चीजों से दूर,
ओ मजदूर, ओ मजदूर ।'

९. सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्रण :- छायावाद में कल्पना का प्राधान्य था । प्रगतिवाद में सामाजिक-यथार्थ की दृष्टि मूलमंत्र के रूप में अभिव्यक्त हुई । यहाँ निम्नवर्ग की प्रतिष्ठा हुई । अर्थात् पिछड़े वर्ग को महत्व दिया गया। यहाँ कवि के सम्मुख अनेक समस्याएँ रही हैं । कवि पीड़ित का हाहाकार और उसकी भूख की पुकार से द्रवित हो जाता है । इसलिए वह समाज का यथार्थ चित्रण करने में नहीं चूकता । वह कह उठता है -

'हाय मृत्यु का ऐसा अमर अपार्थिव पूजन,
जब विषण्ण निर्जीव पड़ा हो जग का जीवन (ताज) । सुमित्रानन्दन पंत

१०. अंग्रेजों का विरोध (प्रतीकात्मक व्यंग्य) :- इस समय तक शिक्षा के प्रचार के कारण जनता जागृत होती जा रही थी । फिर भी प्रगतिवादी कवियों ने जन जागृति की । इसी बात को ध्यान में रखकर व्यंग्य भरी कविताओं की सृष्टि की है । निराला ने बड़े तीखे व्यंग्य अपनी प्रसिद्ध कविता 'कुकुरमुत्ता' में लिखे । 'कुकुरमुत्ता' गरीबों का प्रतीक है और गुलाब का फूल अमीरों का। 'कुकुरमुत्ता' अपनी स्थिति पर गर्व करता है और गुलाब पर व्यंग्य करता है -

"अबे ! सुन बे गुलाब !
भूल मत अगर पायी है खुशबू रंगो आब ।
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट
डाल पर इतरा रहा है कैपिटलिस्ट ।
कितनों को तूने बनाया गुलाम
राजों अमीरों का रहा तू प्यारा
इसलिये साधारणों से रहा तू न्यारा ।"

११. मानवता का सर्वोच्च स्थान (मानवतावाद) :- इस प्रकार के मार्क्सवादी प्रगतिशील विचारों ने मानवता की असीम शक्ति के प्रति आस्था और उनकी सर्वोपरिता स्थापित की है । ईश्वर के प्रति अनास्था की भावना भी उत्पन्न की है । अतएव प्रगतिवादी साहित्य में मानवता को सर्वोच्च स्थान प्रदान करने की घोषणा करते हुए कहा गया है -

'देश काल और स्थिति से ऊपर
मानवता को करो प्रतिष्ठित ।' सुमित्रानंदन पंत

कवि संसार के सब पीड़ित लोगों से प्यार एवं सहानुभूति रखता है, क्योंकि वह सबका उत्कर्ष चाहता है । कवि नरेन्द्र शर्मा ने घायल मानवता पर अनेक आँसू बहाये हैं और कहा है -

'जाने कब घाव भरेंगे, इस घायल मानवता के,
जाने कब तक सच्चे होंगे, सपने सबकी समता के ।'

१२. पाश्ववाद (Fascism) का विरोध :- मार्क्सवाद के अनुसार पाश्ववाद समाज में साम्य का विरोधी और मानवता का शत्रु है । अतः प्रगतिवादी साहित्यकारों ने भी समय-समय पर पाश्ववाद का विरोध किया है । वह फैसिस्तवाद का विरोध करते हुए लिखता है -

'राइन तट पर लिखी सभ्यता, हिटलर कौन बोले ।
सस्ता खून यहूदी का है, नाजी निज स्वस्तिक खोले । दिनकर

संक्षेप में प्रगतिवाद की दुर्बलताओं को स्वीकार करते हुए यह मानना ही होगा कि हमारे प्रगतिवादी साहित्य की उपलब्धियाँ कुछ कम महत्त्वपूर्ण नहीं हैं । इसीलिए विचारक उचित ही कहते हैं - "जीवन की विषमता का निवारण कर मानवता की प्रतिष्ठा, इसका उच्चादर्श निश्चित रूप से वंदनीय है ।"

प्रयोगवाद की विशेषताएँ -

१. घोर अहंनिष्ठ व्यक्तिवाद

व्यक्तिवाद को प्रयोगवादी काव्य की सबसे महत्वपूर्ण प्रवृत्ति के रूप में स्वीकार किया जा सकता है । यह व्यक्तिवाद प्रयोगवादी कवियों में अनेक रूपों में अभिव्यक्त हुआ है । अज्ञेय जिसके सबसे मुख्य प्रवक्ता रहे हैं । इस दृष्ट से उनकी 'नदी के द्वीप' और 'यह दीप अकेला' - कविताओं की लिया जा सकता है ।

प्रयोगवादी कवि इतना अहंनिष्ठ व्यक्तिवादी है कि वह सामाजिक जीवन के साथ किसी प्रकार से गठबन्धन नहीं कर सकता । प्रयोगवादी कवियों ने एक उद्दंड और छिछोरे बालक की तरह मुँह मटका-मटका कर गीत गाये हैं ।

व्यक्तिवाद की प्रधानता भारतेन्दु युग, द्विवेदीयुग और छायावाद युग में भी थीं, किन्तु प्रयोगवाद की तरह उनका घोर अहंनिष्ठ व्यक्तिवाद नहीं था, बल्कि उसमें उदात्त लोकव्यापक भावना है । प्रयोगवादी कवियों ने कविता की आड़ में घोर व्यक्तिवाद का चित्रण करते हुए आत्मविज्ञापन का निन्दनीय प्रयास किया है । एक आत्मविज्ञापन का उदाहरण देखिए -

"साधारण नगर के
एक साधारण घर में
मेरा जन्म हुआ,
बचपन बीता अति साधारण
साधारण खान-पान
साधारण वस्त्र-वास ।"

इस कविता के नामधारी पंक्तियों में हिन्दी साहित्य की कहाँ तक श्रीवृद्धि हुई इस बात को पाठक ही जानता है । प्रयोगवाद के बड़े से बड़े कवि में व्यक्तिवाद की प्रधानता देखने को मिलती है । अज्ञेय ने व्यक्ति के अहंकार को समाज की पंक्ति में रख देना चाहा है -

"यह दीप अकेला स्नेह भरा
है गर्व भरा मदमाता, पर
इसको भी पंक्ति को दे दो ।"
"हम नदी के द्वीप हैं
हम यह नहीं कहते कि
यह स्रोतस्विनी वह जाये ।"

२. दूषित वृत्तियों का नग्न रूप में चित्रण -

प्रयोगवादी कवि के लिए ऐसी कोई दूषित वृत्ति नहीं है, जिसका चित्रण वे नहीं करते। प्रयोगवादी कवि तो अश्लील, अरुचिकर, असभ्य विषयों के चित्रण में ही अपना आत्मगौरव समझते हैं । वे अपने मन की कुंठाओं को मुक्त अभिव्यक्ति देना चाहते हैं । इससे समाज पर क्या प्रभाव पड़ेगा, इस बात की उन्हें परवाह नहीं है । लोकमर्यादाएँ उनके लिए उपेक्षणीय हैं । प्रयोगवादी कवि खाओ, पिओ और मौज उड़ाओ इसी सिद्धांत के पक्षपाती हैं । इसी कारण इस कविता के कवि की कृति दूषित वृत्तियों के चित्र में ही रमी हैं । इस कविता की यह प्रवृत्ति और ये नग्न चित्र समाज को कहाँ ले जायेंगे इसका उत्तर भविष्य ही दे सकेगा । उदाहरण -

"मेरे मन की अंधियारी कोठरी में
अतृप्त आकांक्षा की वेश्या बुरी तरह खाँस रही है ।" - अनंत कुमार

प्रयोगवादी कवि फ्रायड के मनोविश्लेषण के प्रभाव से ही नग्न यथार्थवाद की सृष्टि करता है । प्रेम का कोई उदात्तरूप इस कविता में अभिव्यक्त नहीं हुआ, किंतु श्लील-अश्लील वृत्तियों का नग्न रूप जरूर व्यक्त हुआ है । अपनी पुस्तक 'तारसप्तक' की भूमिका में कवि अज्ञेय जी लिखते हैं -

"आधुनिक युग का साधारण व्यक्ति सेक्स संबंधी भावनाओं से आक्रान्त है । उसका मस्तिष्क दमन की गयी सेक्स की भावनाओं से भरा हुआ है । इसी लिए कविता में इस प्रकार की बात आई है ।" यह सच ही है कि प्रयोगवादी कवि भी अपने गुरु फ्रायड के समान ही काम वासना को ही जीवन की प्रमुख प्रवृत्ति मान लेते हैं ।

३. निराशावाद (क्षणवादिता) -

प्रयोगवादी कविता का कवि अतीत की प्रेरणा और भविष्य की उज्वल आशा से विहीन है । उसकी दृष्टि केवल वर्तमान पर ही है । वह निराशा से पूर्णतः घिरा हुआ है । उसके लिए जगत क्षणवादी या निराशावादी है । कल उसके लिए निरर्थक है । डॉ० गणपतिचंद्र गुप्त के शब्दों में "प्रयोगवादी कवियों की स्थिति उस व्यक्ति के समान है, जिसे यह विश्वास हो कि अगले क्षण में ही प्रलय होने वाली है । अतः वर्तमान क्षण में ही वह सब कुछ प्राप्त कर लेना चाहता है ।"

"आओ, हम उस अतीत को भूलें
और आज की अपनी रग-रग की अन्तर को छूलें
छूलें इसी क्षण
क्योंकि कल वे नहीं रहेंगे
क्योंकि कल हम भी नहीं रहेंगे ।"

४. यथार्थवाद की प्रतिष्ठा -

इस काव्यधारा की सर्वप्रधान विशेषता यह है कि इसमें कल्पनाशीलता के स्थानपर यथार्थवाद की प्रधानता है । छायावादी काव्यधारा में कल्पनाशीलता की ही प्रधानता थी और प्रगतिवाद में सामाजिक यथार्थ को ही प्रमुखता दी गयी थी, पर प्रयोगवाद में अतियथार्थवादी प्रवृत्तियों की ही अधिकता है । इस प्रकार जहाँ छायावादी कवि प्रकृति के चिर-परिचित उपमानों को अपनी उदात्त कल्पना से संजोकर प्रकृति सौंदर्य के मृदुल चित्र उपस्थित करते थे, वहाँ प्रयोगवादी कवि उसकी क्षुद्रता का उद्‌घाटन करने में ही अपनी यथार्थवादिता का परिचय देते हैं।

मूल में प्रयोगवाद का आधार दृष्टि की नवीनता है । इसलिए वह यथार्थ को लेकर नवीन-नवीन प्रयोग करता है । दूसरी ओर मौलिकता प्रयोगवाद का विशिष्ट गुण है । 'रेडीमेड आइडियाज' को लेने के स्थान पर वह अपने नये विचारों को महत्व देता है । वह सत्य चाहता है । अतः कविता में सत्य का ही दर्शन कराता है ।

५. अति बौद्धिकता और शुष्कता -

प्रयोगवादी कविता में सरसता और रागात्मकता के स्थानपर पांडित्य का अधिक्य है । वे मस्तिष्क को कुरेद-कुरेद कर कविता लिखने में विश्वास रखते हैं। अतिबौद्धिकता की यह कविता पाठक के हृदय को तरंगायित न कर, उसकी बुद्धि को ही परेशान करती है । संक्षेप, में हम कह सकते हैं कि नयी कविता में रागात्मकता के स्थानपर अस्पष्ट विचारोत्मकता है । इसीलिए उसमें साधरणीकरण की मात्रा का अभाव है । डॉ० धर्मवीर भारती ने बौद्धिकता का समर्थन करते हुए लिखा है- "प्रयोगवादी कविता में भावना है, किन्तु हर भावना के सामने एक प्रश्नचिह्न लगा है । इसी प्रश्नचिह्न को आप बौद्धिकता कह सकते हैं ।"

जैसे अज्ञेय की 'हरी घासपर क्षणभर' इस कविता में भावुकता के स्थानपर बौद्धिकता की ही प्रतिष्ठा हुयी है, जिसमें कवि स्वयं ही अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए समाज की शंका को बताता है, क्योंकि वह धुँधले में किसी के साथ दबकर बैठा है ।

"चलो उठे अब
अव तक हम थे बंधु
सैर को आये
और रहे बैठे तो
लोग कहेंगे

धुँधले में दुख के दो प्रेमी बैठे हैं ।
वह हम हों भी तो यह हरी घास ही जाने ।''

६. वैचित्र्य प्रदर्शन -

अधिकतर प्रयोगवादी कवि वैचित्र्य प्रदर्शन की प्रवृत्ति को लेकर चले हैं । उनमें किसी वृत्ति का संयोजन नहीं मिलता है । कहीं-कहीं तो यह प्रवृत्ति बहुत अधिक हास्यास्पद हो गयी है । कुछ एक कवियों का लक्ष्य केवल विलक्षणता, आश्चर्य, दुरूहता से अपनी नूतनता को प्रगट करना ही प्रतीत होता है । प्रयोगवादी कलाकर कलाको जीवन के लिए न मानकर कला केवल कला के लिए ही मानते हैं । जैसे -

(अ) ''अगर कहीं मैं तोता होता !
तो क्या होता ?
तो क्या होता,
तोता होता !
तो तो तो तो
ता ता ता ता
होता होता होता होता ।''

(आ) ''ई से ईश्वर
उ से उल्लू
नहीं जी वही पंछी
जो देखता है रातभर ।''

ऐसी कविताओं को देखकर पंडित नन्ददुलारे बाजपेयी ने लिखा है - ''प्रयोगवादी साहित्यकार में साधारणतः उस व्यक्ति का बोध होता है, जिसकी रचना में कोई तात्विक अनुभूति, कोई स्वाभंविक क्रम विकास या कोई सुनिश्चित व्यक्तित्व न हो ।''

७. व्यापक सौंदर्य भावना -

सौंदर्यवाद एक शाश्वत प्रवृत्ति है, जो युगानुरूप प्रतीकों एवं भाषा शैली के माध्यम से प्रत्येक युग के साहित्य में प्रगट होती है । छायावाद में सौंदर्य की प्रवृत्ति का युगानुरूप प्रकाशन रहा है । प्रगतिवाद में सौंदर्य वोध के मापदंड बदले और निम्न स्तर के मानव जगत में सौंदर्य वोध उद्घाटित हुआ । प्रयोगवादी कवि और आगे बढ़ा अब सौंदर्य का विस्तार -

चूड़ी का टुकड़ा,
गरम पकौड़ी
बाँस की टूटी हुई तट्टी,
फटी ओढ़नी की दो चार चिंधियाँ भी

इन कवियों को सुन्दर दिखाई देती हैं । नये कवियों का विश्वास है कि संसार की कोई भी चीज उपेक्षणीय नहीं है । प्रयोगवादी कवि अपनी अहंवादी प्रकृति के कारण तुच्छ-से-तुच्छ

वस्तु में भी सौंदर्य के दर्शन करता है और कविता के लिए अपना विषय बनाता है । प्रयोगवादी कवि के सम्मुख 'हे राम, तुम्हारा वृत्त स्वयं ही काव्य है ।' वाला कोई आदर्श नहीं है । जैसे; अति उपेक्षित वस्तु या स्थान का बड़ा सौंदर्यपूर्ण वर्णन करना ही इन कवियों की विशेषता है। कवि मेघराज इन्द्र की 'हवाचली' कविता में इस विशेषता को हम देख सकते हैं -

"हवा चली
छिपकली की टांग
मकड़ी के जाले में फँसी,रही-फँसी रही ... ।"

आगे कवि मैल की टोकरी ले जाती हुई मेहतरानी को भी डटकर देखकर कहता है -

"वाटिका सड़ गयी
चिड़िया उड़ गयी
कुत्ता भी दुम दबाकर भाग गया ।"

८. उपमानों की नवीनता -

प्रयोगवादी कविता में घिसे-पिटे प्रतीकों और उपमानों का त्याग इस लिए भी वह कर देता, क्योंकि वे आकर्षणहीन थे और यांत्रिक युग की जटिल संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने में असमर्थ हो गये थे । अधिक घिसने से यदि बर्तनों का मुल्लमा छूट जाता है, तो प्रतीकों के भी अधिक प्रयुक्त होने से उनकी अर्थवत्ता समाप्त हो जाती है और कवि यह कहने को बाध्य हो जाता है कि -

"ये उपमान मैले हो गये हैं ।
देवता इन प्रतीकों के कर गये हैं कूच ।
कभी बासन अधिक घिसने से मुल्लमा छूट जाता है ।"

नया कवि काव्य में रूढ़ उपमानों का परित्याग कर नवीन उपमा एवं उत्प्रेक्षा का आयोजन करता है -

"चाँदनी उस रुपये-सी है कि जिसमें
चमक है पर खनक गायब है ।"

अज्ञेय की कुछ कविताएँ असंदिग्ध रूप में बड़ी ही अनूठी बन पड़ी हैं -

'ये फूल कचनार के
प्रतीक तेरे प्यार के ।'

इस विशेषता में वस्तु पक्ष की भाँति शिल्पपक्ष (कलापक्ष) में भी नूतन प्रयोग मिलते हैं । भाषा, छन्द, उपमानों का चयन, प्रतीकों की योजना सर्वत्र नूतनता का मोह दिखलाई देता है । कई स्थलों पर हठवादिता के कारण शब्दों को तोड़ा-मरोड़ा भी गया है । छन्दों के बंधन नये कवि को स्वीकार नहीं हैं । फलत; छन्द की भी प्रधानता इनमें रही है । कुछ तो ऐसे भी छन्द हैं, जिनमें न लय है और न गति । वे सर्वथा नीरस ही प्रतीत होते हैं । छन्दों के नूतन प्रयोगों के साथ उपमानों की नवीनता, रूपकों का विधान और अलंकारिता के संबंध

में भी नये कवि ने नितान्त अलौकिक नूतनता को खोजना चाहा है । कुछ उदाहरण बड़े दर्शनीय हैं ।

१. 'प्यार का बल्ब फ्यूज हो गया ।'
२. 'मेरे सपने इस तरह टूट गये, जैसे भूँजा हुआ पापड़ ।'
३. 'पूर्व दिसि में हड्डी के रंग का बादल लेटा है ।'
४. 'पहले दर्जे के लोग कफन की भाँति उज्ज्वल कपड़े पहनते हैं ।'
५. 'बासी ककड़ी-सी अलसाई ।'
६. 'सड़ा हुआ नारियल-सा खाली मस्तिष्क तुम्हारा ।'
७. 'एक रेकॉर्ड-सी बनती हुई जिन्दगी ।' आदि आदि ।

उपर्युक्त उदाहरणों के आधारपर कहा जा सकता है कि कलाकार को नवीनता के आवेश में औचित्य का अतिक्रमण करके कलाबाजी में बाजीगर नहीं बनना चाहिए । वैसे प्रयोगवादी कवि की जीवन-दृष्टि गहन है । प्रयोगवाद बौद्धिकता का विशेष आग्रही है - वह प्रत्येक वस्तु को प्रौढ़ दृष्टि से देखता है । शिवदानसिंह चौहान प्रयोगवाद को 'त्रिशंकुओं का साहित्य' कहते हैं तथा डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी ने भी कहा है - "प्रयोगवाद प्रमुखतः कविता का आन्दोलन था, जो वाद में नयी कविता के रूप में परिणत हो गया ।"

६. भाषा शैली -

प्रयोगवादी कवियों ने कहीं-कहीं भाषा के अच्छे प्रयोग किए हैं, किन्तु कहीं-कहीं तो विलक्षण स्वच्छन्दता के कारण खड़ीबोली के व्याकरण रूप की अवहेलना की है । भाषा में नवीन प्रयोग की हठवादिता के कारण इन्होंने अपनी कविता की भाषा में भूगोल, विज्ञान, दर्शन, मनोविज्ञान तथा बाजारू बोली के शब्दों का भी प्रयोग किया है । भाव-भाषा, शैली और छन्द के क्षेत्र में संपन्नता के स्थानपर विलक्षणता को ही आश्रय देने के कारण, इनकी कविता का अपना आकार आधुनिक सांस्कृतिक ढाँचें के समान चरमरा उठा है । इस प्रकार हम देखते हैं कि भाषा और भाव दोनों क्षेत्र में प्रयोगवादी रचनाएँ असाहित्यिक हैं । कबीर ने तो अनपढ़ होने के कारण खिचड़ी भाषा का प्रयोग किया था, लेकिन यहाँ पढ़े-लिखे जान बूझकर भाषा को खिचड़ी बनाने चले हैं । प्रस्तुत विवेचन का अर्थ यह नहीं कि प्रयोगवादी कवियों ने जो कुछ साहित्य सर्जना की है, वह निरुपयोगी तथा निरर्थक है - ऐसी बात नहीं है । उसमें साहित्य की प्रगति, उत्थान और उत्कृष्टा के बीज हैं । अज्ञेय जी का कथन हैं - "प्रयोगशील कविता में नये सत्यों या नयी यथार्थताओं का बोध भी है । उन सत्यों के साथ नये रागात्मक संबंध भी हैं और उनको पाठक या सहृदय तक पहुँचाने की शक्ति यानी साधारणीकरण भी है ।" प्रयोगवादी कवियों का कर्तव्य है कि वे नवीनता को अवश्य ग्रहण करें, किन्तु परम्परा के संदर्भ में प्रयोगवादी साहित्य सशक्त होगा, तो उसमें गति आ जायेगी और आलोचक एक 'स्वर' से उसका गुणगान करने लगेंगे।

प्रमुख कविगण - डॉ० जगदीश गुप्त, मेघराज इन्द्र, अज्ञेय, डॉ० धर्मवीर भारती, अनंत कुमार, शकुंतला माथुर तथा तारसप्तक के अन्य सभी कवि ।

नई कविता की विशेषताएँ

(१) **जीवन के प्रति आस्था :** नई कविता की सबसे प्रमुख प्रवृत्ति यही है, जो कविता को प्रयोगवादी काव्य से अलग करती है । नई कविता में जीवन के प्रति पूर्ण आस्था और उसे अन्तिम क्षण तक भोगने का संकल्प अभिव्यक्त हुआ है । नई कविता में जीवन को नगण्य, दीन, अकिंचन या एकांगी नहीं स्वीकार किया गया । जीवन चाहे व्यक्ति का हो या वर्ग का, चाहे समाज का ही क्यों न हो, उसे जीवन के रूप में ही देखा गया है । भवानीप्रसाद मिश्र प्रयोगों से घुटकर जीवन का त्यौहार मनाते हुए कहते हैं -

'इस दुखी संसार में जितना बने हम सुख लुटा दें ।
बन सके तो निष्कपट मृदु हास के दो कन जुटा दें ।

आशा और उल्लास नये कवि के जीवन का अंग बन गए -

'वही है पास में पनघट
किलकती कोकिला बेमान देखती जब
चाँद मुखड़े पर घटा-सी छा गई लटें
खड़ी है सिर लिए गागर, तुम्हारी इन्तजारी में
दरद करती कमर, दिल काँपता है बेकरारी में ।' **- हरिनारायण व्यास**

यही आस्था हमारी संस्कृति की थाती है, जो हमें हताश से बचाती है -

१. अभी न हारो, अच्छी आत्मा
मैं हूँ, तुम हो और अभी मेरी आस्था है । **- अज्ञेय**

२. विश्व में जब कुटिलता है, त्रास है
सत्य शिव का तब हमें विश्वास है । **- गिरिजाकुमार माथुर**

३. 'जहाँ पहाड़ों ने
जीवन के खेमे समेटे हैं

वहाँ भी गर्दन ऊँची कर
अपनी आस्था जमा देते हैं
चार दिन के छोकरे नए-नए अंकुर ।' - रणधीर सिन्हा

(२) **समसामयिक जीवन के प्रति जागरूकता** : नई कविता आज के जीवन की कविता है । आधुनिक जीवन सम्बन्धी वस्तुओं और व्यापारों ने इस कविता को प्रभावित किया है ।

'सहारा का रेगिस्तान
आपद मस्तक सुनसान
न नदियाँ न पर्वत
न काफी न शरवत
प्रतिध्वनि भी नहीं न कलख
हवा का लटाक हुआ पुराना शव है ।' - रणधीर सिन्हा

नई कविता में क्षण को सत्य मान लिया गया है । मनोविज्ञान ने अपनी स्थापना में यह सत्य उद्‌घाटित किया है कि निरन्तरता में बाधा नहीं डालती, वरन् वे सम्पूर्ण जीवन को एक श्रृंखला में जोड़ती हैं । क्षणों को सत्य मान लेने का अर्थ होता है - जीवन की एक-एक अनुभूति को, एक-एक व्यथा को, एक-एक सुख को सत्य मानकर, जीवन को साधन रूप में स्वीकार करना । नई कविता में क्षणों की अनुभूतियों को लेकर बहुत-सी मर्मस्पर्शी और विचार प्रेरक कविताएँ लिखी गई हैं ।

(३) **लघु-मानववाद (लघुमानव की प्रतिष्ठा)** : नई कविता ने सामान्यतम, सबसे छोटे तथा निम्न वर्ग के मनुष्य के व्यक्तित्व को समादर रूप में प्रस्तुत किया है । नई कविता ने लघु मानव की लघुता या हीनता को स्वीकार करके उसमें और अधिक हीनता भरने का घृणित कार्य नहीं किया, अपितु उस सामान्य लघु और उपेक्षित मनुष्य को संवेदना, सहानुभूति और समादर की दृष्टि से अंकित करके शेष समाज में उसको महत्वपूर्ण स्थान दिलाने में योग दिया है,

'तो यह नगण्य अस्तित्व एक
किसी के कंधे पर भार नहीं होगा -
थरमस से हम सब
हर भावी यात्री के
प्यासे क्षणों का
अभिलाष भाल चूमेंगे ।' -सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

मानव लघु है, किन्तु सृष्टि की श्रेष्ठतर इकाई है । अतः वामन विराट की क्षमता का प्रतीक है । इसलिए उसे फेंकना नहीं चाहिए -

'मैं रथ का टूटा पहिया हूँ
लेकिन मुझे फेंको मत
इतिहासों की सामूहिक गति
सहसा झूठी पड़ जाने पर

क्या जाने
सच्चाई टूटे पहिए का आश्रय ले ।'

- धर्मवीर भारती

अन्यत्र भारती जी मानव की क्षमता व सामर्थ्य का बोध कराते हुए कहते हैं -

'हारो मत, साहस मत छोड़ो
इससे भी अथाह शून्य में
बौनों ने तीन पगों में धरती नापी ।'

(४) **व्यक्तिवाद का विरोध (सामाजिक दृष्टि)** : नई कविता में व्यक्तिवाद का विरोध कर समाज को महत्व दिया गया है । इसमें परम्परा के आवश्यक तत्वों के साथ-साथ नए तत्वों का सम्यक अंगीकार है -

'मैं एक साँप हूँ, हम कई साँप हैं
साँप भी ऐसे हैं, सबकी दुम कटी हुई है ।
दुमकटा साँप बहुत धोखेबाज होता है । ...
औरों को नहीं सिर्फ अपने को डसा है ।'

- अभिजात

उपर्युक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि नई कविता परम्परा का स्वाभाविक विकास है । लिहाजा भवानीप्रसाद मिश्र तीर जैसे बढ़ना चाहते हैं-

'ये किसी निश्चित नियम, क्रम की सरासर सीढ़ियाँ हैं
पाँव रखकर बढ़ रही जिस पर कि अपनी पीढ़ियाँ हैं,
बिना सीढ़ी के बढ़ेंगे तीर के जैसे बढ़ेंगे ।'

नई कविता अपनी पूर्ववर्ती काव्य-धारा प्रयोगवाद से इस कारण भी स्पष्टतः अलगाव रखती है कि जहाँ प्रयोगवादी कविता केवल व्यक्ति के अहम्,आशा, निराशा, कुण्ठा, घुटन, चेतना, विश्वास को ही व्यक्त करती थी, वहाँ नई कविता समाज के प्रति भी अपना दायित्व पूरा करने में पीछे नहीं है । लोक के जीवन-विश्वास, उसके सुख-दुख, हर्ष-विषाद, आशा-आकांक्षा और युग-सम्मत विकास तथा परिवर्तन करने में सहयोगी बनना नई कविता की महत्वपूर्ण विशेषता है । अर्थात् नई कविता लोक-जीवन के निकट पहुँचने का उपक्रम है।

(५) **अनास्थावादी व संशयात्मक स्वरों की अभिव्यक्ति** : यह नई कविता की एक मुख्य विशेषता है । अनास्था कुण्ठा से उपजती है, जब कि कुण्ठा से घुटन उत्पन्न होती है । इसलिए कवि कहता है -

'अपनी कुंठाओं की
दीवारों में बन्दी
मैं घुटता हूँ ।'

- धर्मवीर भारती

नया कवि कुण्ठा जन्म असमर्थता को वाणी देते हुए कहता है कि -

'मैं खंडित प्रतिमानों की विक्रांत आत्मा हूँ
प्रत्येक योनि से निष्कासित
सीमा रक्षकों से दंडित

प्रेत योनि में स्थित हूँ
अकांड नर्तन मेरा कर्म है ।'

- राजेन्द्र किशोर

धर्मवीर भारती कृत 'अंधायुग' में इस अनास्था का जीवित स्वर सुनाई देता है । आधुनिक युग के मानव मूल्यों के विघटन का चित्र उसमें खूब उभरा है । नई कविता में दर्द, निराशा, कुंठा, पराजय स्थायी नहीं हैं और नये जीवन में ठहराव या ध्वंस उत्पन्न करती है । प्रयोगवादी कवि निराशा, कुंठा, पराजय को ही सत्य मान बैठा था, नई कविता का रचनाकार दर्द, निराशा और कुंठा में से प्रकाश प्राप्त करता है ।

'दुःख सब को माँजता है ।
और,
चाहे स्वयं सबको मुक्ति देना न जाने, किन्तु
जिसको माँजता है,
उन्हें यह सीख देता है कि
सब को मुक्त रखें ।'

- अज्ञेय

(६) अश्लीलता या वासना का नग्न चित्रण : नई कविता ने काव्य से भिन्न भाषा को व्यावहारिक और बौद्धिक मानते हुए अपनाया। ये नए शब्द कवि द्वारा उन्हें काव्य-भाषा में बदलने के प्रयासों को प्रतिध्वनित करते हैं कि किस तरह ये 'काव्यात्मक' बन गए, 'वीरेन्द्र कुमार जैन' की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं :

'इरॉस थियेटर' के सिने पोस्टर का एक चुम्बन
पूरे 'हालीवुड' की जंघा में डसता हुआ एक बिच्छू
'होटल एयर लाईन' के किसी बन्द कमरे में,
एक निहायत हसीन कुंआरे सीने को
आलिंगन में कसता सुवर्ण का मारीच

- अभी और यहाँ

नई कविता के प्रारंभिक दौर में शब्दों से नई अभिव्यंजना अभिव्यंजित कराने, नए उपमान, नए प्रतीक बनाने, भाषा को तराशने जैसे कामों को प्रमुख माना गया था, लेकिन धीरे-धीरे भाषा पर अतिक्रमण प्रदूषण में बदल गया । नई कविता में प्रेम और काम की अभिव्यक्ति सहज भी है ।

फिर कटीली दृष्टि रंजित प्यार दो
आदमी की शक्ति का आधार दो
प्यार तुमसे हो जगत से प्यार हो
प्रेरणा यह रंगमय संसार हो !

वर्तमान युग में हमारे जीवन के हर क्षेत्र में राजनीति का दबाव इतना आक्रामक और तीव्र है कि हम उससे बच नहीं पाते । नई कविता में राजनीति पर कुटनीति से खूब लिखा गया है - 'कैलाश बाजपेयी' की ये पंक्तियाँ देखिए -

'मैं देखता हूँ
कुछ लकड़बग्घे संसद से निकलकर
पहुँच गए हैं घर रखैल के
और उधर कोई सुकरात रोज
अंधा हो जाता है सीखचे गिनते हुए जेल के ।'

नयी कविता के पक्षधर भोगवाद, नैतिकता, मर्यादा में किसी प्रकार का सामंजस्य स्वीकार नहीं करते । इसी कारण कविता में शासन, मांसलता और स्थूल श्रृंगारिकता आ गयी है । 'पूर्णमासी की रात' में कवयित्री 'शकुन्तला माथुर' का अनुभव द्रष्टव्य है -

'पूर्ण मासी रात भर
पीती रही सुधा
अंक में शशि के सिमट कर
धोती रही श्यामल वदन
सुध-बुध बिसार ।'

इतना ही नहीं 'कवयित्री शान्ता सिन्हा' तो अपने दोस्तों और साथियों को मौज-मस्ती मनाने के लिए इन शब्दों में आंवाहन करती हैं -

'आज मुख्य मेहमान तुम
रात के इस 'फ्लोर शो' में
एक बार बस एक बार
अपने तन की छाप छोड़ जाओ
मुझ पर ..... ।'

लौकिक प्यार से अलौकिक प्यार का छोर छुआ जा सकता है । सूखी नदी में नाव कैसे चल सकती है ? वासना के माध्यम से ही अलौकिक तथ्यों की खोज संभव हो सकती है -

'वासना की घोर अंधी तहों में
अनुभूति के सत्य
अपने में छिपाए वे अलौकिक तथ्य ।' **- कुँवर नारायण**

(हि०सा०का० समग्र इतिहास पृष्ठ ४०७)

(७) **हास्य-व्यंग्य :** नई कविता में हास्य व्यंग्य की मानो झड़ी लगी-सी दिखती है -

१. उसकी बोली तड़तड़ी है
गुस्सा पटाखा है
यह मेरी घरवाली है
घर में रोज दीवाली है ।

२. गाय बोली बैल से
क्यों छेड़ते हो भाई !

जानते हो, कहतें हैं,
सब मुझे माई !
बैल बोला धत्त रे ।
मारूँगा दुलत्त रे ।
मैं भी चौपाया और
तू भी है चौपाई ।

- भारतभूषण अग्रवाल

(८) **अनुभव की प्रामाणिकता :** नई कविता में बौद्धिकता के आधिक्य के बावजूद अनुभव की प्रामाणिकता की चर्चा की जाती रही है । जीवन में जो प्यार का अनुभव अत्यंत महत्त्वपूर्ण रहा है, उसके बारे में श्रीकांत वर्मा का प्रामाणिक अनुभव है -

'बाध्य हैं हम दोनों
एक दूसरे से घृणा
करते हुए
करने को प्यार ।'

दूसरी ओर यह प्यार स्पर्श चेतना की ओर झुका हुआ है । धर्मवीर भारती कहते हैं -

'स्पर्श की बादल धुली कचनार नर माई ।'

नई कविता में कवि अपने अनुभवों को सूक्ष्म बनाकर ईमानदारी के साथ अभिव्यक्त करता है । यह अनुभूति चाहे क्षण की हो या एक समूचे काल की, किसी सामान्य व्यक्ति की हो या विशेष पुरुष की, आशा या निराशा की, अनुभूति की सच्चाई कविता और जीवन दोनों के लिए अमूल्य है । नई कविता अनुभूतिपूर्ण गहरे क्षण, प्रसंग, व्यापार या किसी भी सत्य को उसकी आन्तरिक मार्मिकता के साथ पकड़कर व्यक्त करती है, जिससे उस व्यापार या प्रसंग को नया अर्थ मिल जाता है । यथा -

'चेहरे के असंख्य
आँखें थीं
दर्द सभी में था
जीवन का दंश सभी ने जाना था
पर दो
केवल दो
मेरे मन में कौंध गई
मैं नहीं जानता किसकी वें आँखें थीं
नहीं समझता फिर उनको देखूँगा ।'

(९) **शिल्प विधान या भाषा शैली : (अ) बिम्ब योजना :** नई कविता ने नवीन वैज्ञानिक उपकरणों, यंत्रों का प्रभाव स्वीकारा है । अर्थात् नई कविता में बिम्ब योजना सजीव, स्पष्ट व समग्र है -

१. 'कैमरे में लैन्स सी आँखें बुझी हुई,
बिगड़े, कमबख्त लाउडस्पीकर से
जिनके मुख निःशब्द खुले हैं ।
दांतेदार पहिए सा घूमे जाता है
टाइपराइटर की 'की' की तरह
सब के पैर बारी-बारी से उठते हैं ।'

- भारतभूषण अग्रवाल

२. अन्तर्मनुष्य
रिक्त-सा गेह
दो लालटेन से नयन
निष्प्राण स्तंभ
दो खड़े पाँव ।

- मुक्तिबोध

यहाँ यह कहना उचित होगा कि बिम्ब विधान ही कविता को कविता के रूप में प्रतिष्ठित कर सकता है । बिम्ब-सौंदर्य कविता की अंतरंग छवि है, जो उसके कथ्य और कवि के प्रेषित भाव को सम्यक् रूप से प्रस्तुत करते हैं ।

(आ) फैंटेसी, मिथकों और प्रतीकों का अधिक प्रयोग : नई कविता में फैंटेसी, मिथकों और प्रतीकों का अधिक प्रयोग करने की प्रवृत्ति है । कहीं-कहीं फैंटेसी अधिक मात्रा में उभरी है । प्रतीक भारतीय परंपरा के अनुरूप तो कहीं-कहीं पाश्चात्य परंपरा के अनुरूप प्रयुक्त हुए हैं । 'छिपकली' पश्चिम में काम प्रतीक भले ही हो, भारत में काम प्रतीक नहीं । पश्चिम में गिलहरी खुशी का प्रतीक है - वर्फ के पिघलने पर उसका खेलकूद दीखने लगता है, भारत में ऐसा नहीं है । मिथकों का प्रिय होना भी नई कविता की एक प्रवृत्ति है ।

(इ) छन्द विधान : नई कविता के कवियों ने उर्दू, अंग्रेजी आदि भाषाओं की छन्द योजना के साथ-साथ मुक्त छन्द या गद्य छन्द भी स्वीकारा है । भवानीप्रसाद मिश्र का एक छन्द विधान देखिए -

'शक्ति दो, बल दो हे पिता
जब दुख के भार से मन थकने आय
पैरों में कुली की सी तुपकती चाल छटपटाय
इतना सौजन्य दो, कि दूसरों के बक्स बिस्तर
घर तक पहुँचा आए
कोट की पीठ मैली न हो, ऐसी दो व्यथा ।'

यहाँ सवैये की गति में लिखी गिरिजाकुमार माथुर की कविता 'केसर रंग रँगेवन' उदाहरण योग्य है । इसी प्रकार अन्य कवियों ने भी गद्य छन्द में लिखा है । इस कविता के छन्दों में गजलें भी एक प्रकार आता है । 'साये में धूप' दुष्यन्त कुमार की गजलों की प्रसिद्ध कृति है ।

त्रिलोचन कवि ने सॉनेट खूब लिखे हैं । वैसे बच्चन का 'निशा निमंत्रण' सॉनेट (सुनीत) में ही लिखा है ।

इस काल में त्रिपदियाँ (हाइकू) भी अनेकों ने लिखी हैं । यथा -

'ताल पुराना
कूदा दादुर
गुडुप ।' **- अज्ञेय**

(ई) भाषा या शब्दावली : नई कविता की भाषा सामान्य जन के निकट है । व्याकरण मुक्त भाषा ही उन्हें मान्य है, फिर भी कवि कहता है -

'हर शब्द
किसी नये ग्रह लोक में
एक जन्मान्तर है ।' **- केदारनाथ सिंह**

नई कविता के शब्द भी लोक जीवन से ग्रहण किए गए हैं । प्रगतिवाद ने अपनी विचारधारा के क्षेत्र में ही लोकशब्दों को ग्रहण किया था, किन्तु नई कविता ने सभी संदर्भों और प्रसंगों में लोक-शब्दों का प्रयोग किया है । नयी कविता की शब्दावली को अज्ञेय की कविता में ही देखिए -

'दिया सो दिया
उसका गर्व क्या, उसे याद भी फिर किया नहीं ।
पर अब क्या करूँ
कि पास और कुछ बचा नहीं
सिवा इस दर्द के
जो मुझ से बड़ा है, इतना बड़ा की पचा नहीं,
बल्कि मुझ से ऊँचा नहीं ।'

नयी कविता की शब्दावली में जैसे - ऊँचा, पचा, टोपे, भभके, खिंचा, ठिठुरन, सीटी, चिड़चिड़ी, ठसकना, ठूँठ, सिराया, डाकती, अंकुराना आदि शब्दों को देखा जा सकता है, जो लोक जीवन के शब्द हैं । नई कविता की भाषा बोलचाल के निकट तो है ही, उसमें बात-चीत की लय को भी अनेकों ने पकड़ने का प्रयत्न किया है । भवानीप्रसाद मिश्र ने तो कहा है - 'जिस तरह तू बोलता है, उस तरह तू लिख ।' उनकी 'गीत फरोश' कविता में बातचीत की लय देखिए-

'जी हाँ, मैं किसिम किसिम के गीत बेचता हूँ ।'

दूसरी ओर भारती जी एक कविता में बातचीत कैसे करते हैं -

'सुनो
सच बतलाना
क्या तुमको कभी भी
किसी ने भी
इतनी उजला, कोमल, पारदर्शी प्यार दिया ?'